प्रबोधित शिक्षा

(विद्यालयों के लिये मार्गदर्शक)

परमपूज्य श्रीमाताजी निर्मलादेवी के भाषणों से संक्षेप में संकलन

प्रबोधित शिक्षा

(विद्यालयों के लिये मार्गदर्शक)

(Education Enlightened का हिंदी अनुवाद)

परम पूज्य श्रीमाताजी निर्मलादेवी

प्रस्तावना

परमपूज्य श्रीमाताजी की अपनी एक दिव्य सर्वव्यापी दूरदृष्टि है। इसी दृष्टि का अनुसरण कर, उनके द्वारा मनुष्य के सामूहिक उत्थान के लिये एक अद्वितीय शिक्षाप्रणाली उत्क्रान्त की गयी है। आधुनिक काल की अंधाधुंध परिस्थिति में भी बालक का संतुलित विकास करना यह इस प्रणाली का विशेष उद्देश्य है। प्रेम का चिरन्तन तत्त्व ही प्राचीन काल की गुरु-शिष्य परम्परा से मण्डित किया गया है। इस परम्परा में अध्ययन का अर्थ ईश्वर की दैवी इच्छा का पालन, उसके नियमों का आदर और ईश्वरीय विभूति की नित्यता इन बातों के लिये शिष्यों को सज्ज तथा संस्कारित किया जाता था। श्रीमाताजी की दिव्य दूरदृष्टि में इन सब का अन्तर्भाव है।

'शिक्षा' का शब्दश: अर्थ ज्ञान का सहज स्वाभाविक, उत्स्फूर्त आदान-प्रदान, प्रचलन यह होता था। गुरु शिष्य को प्रेम से ज्ञानदान करते थे और शिष्य ज्ञान के इन मोतियों को कृतज्ञता से ग्रहण करता था और उसे अपने व्यक्तित्व में समा लेता था। यह केवल एक के पास से दूसरे तक ज्ञान का संक्रमण नहीं था। यह तो सृष्टि निर्माता की ओर आरोहण के लिये सामूहिक उत्थान का एक सम्पर्क तथा संबंध था। सामूहिक उत्थान के बिना शिक्षा का कोई अर्थ ही नहीं होता है। आधुनिक शिक्षा में यह सचेतन सारभूत घटक ही कहीं खो गया है। इसलिये आज की शिक्षा शुष्क तथा खोखली हो गयी है। विद्यालय और विश्वविद्यालय उच्च शब्दों से निनादित उपाधियाँ (बड़े-बड़े शब्दोंवाली उपाधियाँ) भले ही दे दें, परंतु जहां आत्मा की उपेक्षा की जाती है वहाँ व्यक्तित्व अपूर्ण तथा असंतुलित रह जाता है। सौभाग्य से परमपूज्य श्रीमाताजी निर्मलादेवी के आगमन से, उनके द्वारा दिये गये

सहजयोग के अमूल्य उपहार के प्रकाश से हमारी शिक्षा प्रबोधित, आलोकित हो गयी है।

हमारे अन्तरतम में जो गूढ़, अदृश्य चेतना है, उसे सहजयोग पुष्ट करता है। इतना ही नहीं, सहजयोग साक्षात्कारी व्यक्तियों के रूप में हमें पुनरुज्जीवित करता है। श्रीमाताजी के द्वारा दिये जाने वाले आनंद और प्रेम से साक्षात्कारी व्यक्ति दूसरों के दीप भी जला सकते हैं।

स्वाभाविक ही है कि सहज शिक्षा राष्ट्रीय-शिक्षा-मण्डल-प्रणीत शिक्षासंबंधी पाठ्यक्रम का परिग्रहण स्वीकार करती है। पर और इससे पार जाकर सहज शिक्षा शुद्ध चैतन्य की अबोधिता के मूल्यवान, मोहने वाले दिनों का आनंद लेने के लिये बालक को अवसर प्रदान करना भी अन्तर्भूत है।

यह तो अलग प्रकार से किया गया अध्ययन है। घर के सहृदय प्रेममय दायित्व से बालक का परिपालन किया जाता है और बाह्य जगत् की वास्तविकताओं का सारासार रूप में गुणग्रहण करने के लिये भी उसे सिद्ध किया जाता है। इस प्रकार सुज्ञता, विवेकशीलता उत्पन्न होती है। तब कक्षा में पढ़ाये गये पाठ इस अध्ययन प्रक्रिया का अभिन्न अंश बन जाते हैं। पढ़ा गया प्रत्येक पाठ एक आनंदमय अनुभव होता है। इससे बालक की बोधवृत्ति तथा उत्थान समृद्ध होता है।

सहजयोग से आत्मसाक्षात्कार का अनुभव होता है। इस साक्षात्कार द्वारा आत्मिक आनंद प्रकट होता है। इस आत्मानंद की अभिव्यक्ति विविध प्रकारों से होती है। इससे सौंदर्यानुभूति, सौंदर्य दृष्टि विकसित होती है। और यह सब बालक के उत्थान से पूर्णता को प्राप्त करता है।

कर्मचारी गण अनुरूप, सुयोग्य, उच्च विद्याविभूषित, बुद्धिमान, सहृदय

और सहजयोग के शास्त्र में अनुभवसंपन्न है। जिनका अनुसरण छात्र आदर्श के रूप में करते हैं ऐसे अध्यापक हैं। सहज-शिक्षा पूरे हृदय से प्रेरित एक प्रयास है। इससे प्रकृति के लिये हृदय में प्रेम प्रतिष्ठित करना, पर्यावरण के प्रति ध्यान तथा दायित्व, सभ्यता तथा मृदुता, उदात्तता, ऋजुता, प्रमाणिकता, सुज्ञता और फिर भी साहस के प्रति हृदय से आकर्षण और मोह इन सब का बालक के व्यक्तित्व में निवेश किया जाता है। मानवी चेतना और चैतन्य स्पन्दन, चैतन्य लहरें जिससे समृद्ध होती हैं ऐसी प्रत्येक वस्तु के साथ, उनसे परिवेष्टित अवस्था में बालक रहता है।

यह पुस्तिकों सहज विद्यालयों के मार्गदर्शन के लिये परमपूज्य श्रीमाताजी निर्मलादेवी के भाषणों से संक्षेप में संकलित की गयी है। धरमशाला, रोम तथा ऑस्ट्रेलिया में इस नमूने पर आधारित विद्यालयों की स्थापना की गयी है। सहज शिक्षा की इस व्यवस्था तथा निर्देश के अनुसार ये विद्यालय यशस्विता से कार्यान्वित हो गये हैं।

- योगी महाजन

निर्मल विद्या की प्रदात्री परमपूज्य श्रीमाताजी निर्मलादेवी को प्रणाम!

अविद्या निवारणकारिणी

हमारे कान वही सुने जो सत्य है,
हमारी आँखें वही देखे जो शुद्ध है,
हम अस्तित्वधारी प्राणिमात्र उसी की प्रशंसा करें जो दिव्य है।
और जो कोई सुन रहे हैं -
वे मेरी आवाज ना सुने -
परन्तु ईश्वर की सूज्ञता सुनें।

मंगल गीत से हम पूजा करेंगे।
समुचित सामर्थ्य तथा कल्याणकारी ज्ञान को
हमारा ध्यान आलोकित तथा समृद्ध करें।
हम सबमें आपस में अनुकंपा, करूणा तथा शान्ति हो।

श्री गणेशजी, प्रणाम, साक्षात श्री निर्मला देवि नमो नमः।
वह आप ही हैं -जो सब आरंभों का प्रारंभ हैं।
उन सब कृत्यों की कर्ता आप ही है,
जो किये गये हैं, किये जा रहे हैं
और किये जाने वाले हैं।

जिन्हें आधार दिया गया है उन सब की आधार आप ही है।
सारी संरक्षित वस्तुओं की रक्षणकर्ता आप ही हैं।
वह आप ही हैं, जो संपूर्ण सर्वव्यापी चैतन्य है,
ईश्वर की दिव्य ऊर्जा!

हे मस्तिष्क, स्पष्टता से विचार करो, केवल सत्य ही बोलो।
हम सब में कुण्डलिनी से जागृत आपकी उपस्थिति ही बोलें;

हम सब में कुण्डलिनी से जागृत आपकी उपस्थिति ही सुनें।
हम सब में कुण्डलिनी से जागृत आपकी उपस्थिति ही आशीर्वाद दें।
हम सब में कुण्डलिनी से जागृत आपकी उपस्थिति ही रक्षा करें।
हम सब में कुण्डलिनी से जागृत हम जो आपके शिष्य हैं,
उनमें जागृत आपकी उपस्थिति अनुशासित शिष्य बनें।

सारा पवित्र वाङमय और पावन शब्दों का सार सत्व आप ही हैं।
आप ही वह ऊर्जा हैं, जो पावन शब्दों का आकलन करती हैं।
आप संपूर्ण सत्य, संपूर्ण आनंद तथा संपूर्ण चेतना का
दिव्य संयोग अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप है।
आप उस सबसे पार हैं।
आप ही ज्ञान हैं और आप ही वह उपयोग हैं
जो ज्ञान में निहित है।

सहज शिक्षा की संस्थापिका परम पूज्य श्रीमाताजी निर्मला देवी की दिव्य दूरदृष्टि

शिक्षा का प्राथमिक प्रयोजन आत्मा का जागरण। स्वयं अनुशासन के द्वारा सहभाग लेना और वैश्विक प्रेम सहज शिक्षा का मूल हेतु है। सहज विद्यालय छात्रों में आपस में एक अनोखा स्नेहबंध-बंधुभाव संवर्धित करते हैं, जिससे शुद्धता, अबोधिता और पावित्रता का बोध प्रतिष्ठापित किया जाता है। प्रतिष्ठा, शालीनता और सदाचरण पर आधारित शिष्ठाचार, इन बातों पर सहज शिक्षा में महत्व और जोर दिया जाता है। इसी कारण से छात्र अपनी नैतिकता की संवेदना का, ईश्वर का मंदिर होने वाले शरीर की पवित्रता का आदर करना सीखते हैं।

सभी धर्मों का सारभूत तत्त्व समान, एक ही है यह प्रतिपादित करने के लिये सभी धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन का उपक्रम तथा प्रवर्तन करना सहज शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों में एक है। इस से छात्रों का ध्यान आध्यात्मिक जीवन पर निहित किया जाता है। सहभागिता, सहिष्णुता, वास्तविक शान्ततामय सहजीवन/सहअस्तित्व और त्याग तथा उदारता से प्राप्त आनंद से एक दूसरों की समस्या का समाधान-यही आध्यात्मिक जीवन है। सहज विद्यालयों का वातावरण शान्त और प्रसन्न होता है। इस प्रकार के वातावरण में अधिकतर ग्रहण होता है और अवधान में कम बाधायें आती हैं।

हमारे परहितैषी और अनुकम्पाशील तथा सहृदय भावी नेता, राजनीतिज्ञ और सद्गुण-संपन्न वीर धीर नायक इन सब के गुणों का बीज बाल्यावस्था में ही बोया जाता है। इसलिये सजीव अंकुर की सजीव प्रक्रिया के द्वारा इन बीजों को बोने के लिये तथा उनका पोषण करने के लिये अतिमात्र ध्यान दिया जायेगा। सहजयोग के अनुसार आध्यात्मिक उत्क्रान्ति को प्रत्यक्ष

रूप देकर छात्र अपने सुप्त सामर्थ्य का संपूर्ण विकास प्राप्त करते हैं। इसलिये छात्रों के लिये सभी कार्य-नीतियाँ स्वाभाविक रूप से इसी प्रकार से ढ़ाली गयी है।

सहज शिक्षा प्रणाली का लक्ष्य यही है कि ऐसी अध्ययन प्रक्रिया को प्रस्तावित करना और उसकी पक्की नींव डालना। अध्ययन प्रक्रिया इस प्रकार की है -

१. जिस प्रकार की दृष्टि से महात्मा गांधीजी ने पूर्वकाल में ही शिक्षा की एक मानसिक रूपरेखा तैयार की थी उसी प्रकार की शिक्षा के लिये आनन्दपूर्ण, सौहार्दपूर्ण तथा पारिवारिक चैतन्यपूर्ण परिवेश पर्यावरण में छात्रों के लिये सब विषयों के आधारभूत प्रारंभिक ज्ञान की पूर्वव्यवस्था की जाये।

२. बालक की स्वाभाविक जिज्ञासा, सृजनशिलता और कल्पनाशक्ति को शान्तिपूर्ण वातावरण में प्रोत्साहित किया जाये।

३. छात्रों को आध्यात्मिक तथा नैतिक तत्त्वों का आकलन होने के लिये यह एक व्यवहार्य मार्ग है।

४. प्रत्येक बालक का व्यक्तित्व तथा व्यक्तिगत भिन्नता का विकास होने देते हुये भी उस बालक को उसकी कथन करने की क्षमता, काम करना, सहभागी होना, सुसंवाद तथा अविरोध रखकर खेलना इन सब के लिये अवसर तथा अनुमति देना। इसमें स्पर्धा को प्रेरित न करना और सामूहिकता की वास्तवता का आनंद लेना भी शामील है।

५. आदर तथा प्रेम के द्वारा प्रत्येक छात्र में दयालुता, ईमानदारी (प्रामाणिकता), धैर्य, औचित्य, संवेदनशीलता, प्रतिष्ठा, अनुकम्पा, गौरव, उत्स्फूर्ति की जो सहज आंतरिक प्रवृत्ति है उसको आविष्कृत करना। इस व्यवस्था से बालक स्वयं के अंतरतम में दृढ़ता से स्थिर होता है। झूठ, ठगना तथा ऊपरी तौर से प्रक्षेपित किये गये मूल्यों को वह बड़ी सरलता से पहचान लेता है। सुज्ञता, विवेक को बालकों में जागृत करने से उसके द्वारा एक

सामान्य समझदारी उनमें उत्पन्न होकर बढ़ जाएगी। उदाहरण के लिये दैनंदिन प्रत्यक्ष व्यावहारिक जीवन का ज्ञान उन्हे सिखाया जायेगा-जैसे कि नानी के बटुएं की दवाईयाँ। इससे विद्यार्थी अपनी स्वयं की तथा बंधुजनों की सहायता करेंगे।

६. अपने व्यक्तिगत तथा सामूहिक दायित्व के संबंध में बालक को सावधान, जागरूक किया जाता है। अपने माता-पिता आयु में बड़े लोग, अध्यापक, बांधव, सार्वजनिक संपत्ति, देश तथा सारी दुनिया के लिये आदर तथा कर्तव्य इन सब बातों का अन्तर्भाव दायित्व में होता है।

सूची

अध्याय क्र.	शीर्षक	पृष्ठांक
1	श्री गणेश तत्त्व की स्थापना	12
2	जन्मजात बालकों का विकास	23
3	उदारता को प्रोत्साहन	26
4	आत्मसन्मान	28
5	बालकों को प्रतिष्ठा प्रदान कीजिये	31
6	प्राकृतिक गुणविशेष	32
7	अनुशासन	36
8	भोजन	39
9	बच्चों ने स्वाभाविक रूप से सामूहिक होना चाहिये	41
10	बच्चों को कैसे सुधारें?	47
11	पैसा	49
12	भाषा प्रसन्न होनी चाहिये	50
13	दीप दूसरों के लिये जलता है, न कि अपने लिये	52
14	सहज संपर्क बढ़ाईये	55
15	सब बच्चों से अपने बच्चों जैसा प्रेम कीजिये	57
16	खेल	58
17	विश्वविद्यालयीन शिक्षा	59
18	छात्रों के अध्ययन कक्षा में	60
19	मेरे फूलों से बच्चों के प्रति	70

अध्याय १

श्री गणेश तत्त्व की स्थापना

श्रीगणेशजी बहुत अधिक शक्तिशाली देवता हैं। श्रीगणेशजी के तत्त्व को यदि हम अपने अंतरंग में जागृत करते हैं तो हम में बालकों जैसा निश्छल स्वभाव विकसित किया जा सकता है। मान लीजिये, कोई बच्चा कहीं खो गया है या कहीं किसी पेड़ पर लटक रहा है, तो उस बच्चे को वहाँ से निकालने के लिए सारे लोग दौड़ पड़ेंगे क्योंकि सब की चिन्ता और ध्यान उसी ओर होगा। बालक स्वयं ही सभी ओर से सुरक्षा प्राप्त करता है। बच्चा बढ़ रहा है इसलिये प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि बच्चे की सहायता करें। प्रत्येक पूजा के पहले हम श्री गणेशजी की स्तुति गा कर करते हैं और हमें श्री गणेशजी के प्रति नितान्त आदर है क्योंकि हमने जान लिया है कि हमारी अबोधिता के प्रतीक श्री गणेशजी यदि हम में जागृत नहीं होते, तो तब तक हम परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते। इतना ही नहीं, उस साम्राज्य में रहने तथा श्रीगणेशजी के आशीर्वाद का आनन्द लेने के लिए हमारी अबोधिता हममें पूर्ण रूप से प्रस्फुटित, प्रफुल्लित होना आवश्यक है। इसलिए हम श्री गणेशजी की स्तुति, प्रार्थना करते हैं और श्रीगणेशजी की स्तुति और प्रसन्नता भी बड़ी सहज, सरल होती है। सहजयोग में आने के पूर्वकाल में हो सकता है हम से कुछ गलत काम किया गया हो या गलतियाँ हो गयी हो, तो उन सबको श्रीगणेशजी पूर्णतया क्षमा करते हैं, क्योंकि श्रीगणेश एक चिरन्तन, शाश्वत बालक हैं।

आपने देखा होगा कि बच्चों को आप थप्पड़ मारते हैं, या कभी-कभी उन पर क्रोध भी करते हैं। पर बच्चे हैं, तो वह सब भूल जाते हैं। उन्हें तो केवल आपका प्रेम ही याद रहता है, आपसे उन्हें जो पीड़ा सहनी पड़ी उसे वे भूल

जाते हैं। जब तक बच्चे बड़े नहीं हो जाते, तब तक, उनको पहले जो बूरी बातें सहनी पड़ी, उसका स्मरण ही नहीं रहता। प्रारंभ से ही अर्थात् जब बच्चा माँ की कोख से पैदा होता है, तब तक उसे कहाँ कैसे गुजरना पड़ा, यह बात बच्चा जानता नहीं। फिर धीरे-धीरे स्मरणशक्ति काम करना शुरू करती है और वह अपने अन्दर बातें पुनः संग्रहित करने लगता है। पर शुरुवात में तो वह उसके साथ जो अच्छी बातें घटी हैं, उन्हीं का स्मरण करता है। इसलिये हमें हमारे बचपन के बारे में सोचना पसंद होता है क्योंकि जिन चीज़ों से हमें जो आनन्द मिला था वह बचपन में था। उन सबका स्मरण करना अच्छा लगता है। पर जैसे जैसे हम आयु में बढ़ने लगते हैं वैसे-वैसे हमारे दुख और जिन सब पीड़ाओं से हमें गुजरना पड़ा, या उन कष्टदायक चीज़ों को हमें पार कर के आना पड़ा, उन सबको याद करना हम शुरू कर देते हैं। हम उन्हें बढ़ा चढ़ा कर देखने का प्रयास करते हैं। बचपन में बच्चे सदैव उन्हीं लोगों को स्मरण रखते हैं जिन्होंने उनसे प्यार किया, न कि उन लोगों को जिन्होंने उनको पीड़ा दी। ऐसा दिखता है कि बच्चे संभवतः उन लोगों की याद करना नहीं चाहते। पर जब बच्चे बड़े होते हैं तब वे केवल उन्हीं लोगों को याद करने का प्रयास करते हैं जिन्होंने उन्हें नुकसान पहुँचाया, कष्ट दिया या परेशान किया। और इस प्रकार से बच्चे अपने आपको बहुत दुखी बनाते हैं। किन्तु श्रीगणेशजी का तत्त्व अतीव सूक्ष्म है। वह तो सूक्ष्म में भी सूक्ष्मतम है। प्रत्येक वस्तू में उसका अस्तित्व है। यह द्रव्य (मैटर) में भी चैतन्य लहरों के रूप में उपस्थित है। ऐसा द्रव्य ही नहीं है जो चैतन्य के स्पंदनों के बिना होता है। द्रव्य में चैतन्य लहरें होती हैं जो अणू और परमाणूओं में देखी जाती हैं। जितना सब द्रव्य अस्तित्व में है उसमें अणु-परमाणु होते हैं।

श्रीगणेशजी ही वह प्रथम देवता हैं जिन्हें द्रव्य में स्थापित किया गया। परिणामस्वरूप हम देख सकते हैं कि वे सूर्य में विद्यमान हैं, उनका अस्तित्व चंद्रमा में भी है। श्रीगणेश संपूर्ण विश्व में, संपूर्ण सृष्टि में विद्यमान है और

मानवों में भी उनका अस्तित्व चल ही रहा है। केवल मनुष्य मात्र में ही यह क्षमता है कि वे येन-केन प्रकारेण अपनी अबोधिता पर आवरण डालते हैं। अन्यथा पशु तो अबोध ही होते हैं। मनुष्यप्राणी तो स्वतंत्र होते हैं। अगर वे चाहे तो अपनी अबोधिता को ढक सकते हैं। वे श्रीगणेशजी के द्वार बंद कर सकते हैं और कह सकते हैं कि श्रीगणेश का अस्तित्व ही नहीं। मनुष्य श्रीगणेशजी के इस अस्तित्व तथा तत्त्व को पूरी तरह आच्छादित कर सकते हैं। इसी कारण मनुष्यजाति में दिखता है कि वे बहुत सारी भयंकर चीज़ें कर रहे हैं, जिस में श्री गणेशजी का अस्तित्व उन्होंने टाल दिया है। पर श्रीगणेशजी कृति करते हैं। वे इस प्रकार काम करते हैं कि हमारे अपकृत्यों के स्वाभाविक परिणाम वे दिखाते हैं। जैसे-श्री गणेश को जिनसे आनन्द नहीं मिलता ऐसे कृत्य आप करते हैं तब वे किसी एक बिंदु पर जाते हैं, किसी बिंदु तक आपको क्षमा करते हैं। पर उसके बाद वे रोगों के रूप में प्रकट होते हैं- शारीरिक रोग और स्त्रियों में तो यह मानसिक व्याधि बन जाती है। श्रीगणेश तत्त्व की अवहेलना प्रकृति में भी समस्यायें निर्माण कर सकती है। प्राकृतिक विपदायें भी श्रीगणेशजी का शाप ही तो है। जब लोग अपकृत्य करना शुरू कर देते हैं और उसके लिये सामूहिक रूप से दुराचरण करते हैं तो उन्हें सबक सिखाने के लिये प्राकृतिक विपत्तियाँ आ जाती है। तथापि अपने सारभूत रूप में श्रीगणेशजी का अस्तित्व प्रत्येक वस्तु में रहता है।

संपूर्ण विश्व का विनाश करने के लिये अपनी इच्छा को दृढ़ता से क्रिया रूप देने की क्षमता श्रीगणेशजी में है। हमारी श्रीगणेशजी की कल्पना एक छोटीसी सूक्ष्म वस्तु के रूप में है। हम सोचते हैं कि अगर श्रीगणेशजी एक छोटे से चूहे पर सवार होकर जा सकते हैं तो वे बहुत ही छोटे-छुटकुले होंगे। वे तो जितने सूक्ष्म हैं उतने ही विशाल भी हैं। अपनी प्रज्ञा और विवेकशीलता के कारण वे अन्य देवताओं से श्रेष्ठ, बढ़चढ़कर है। वे बुद्धिदाता, प्रज्ञाप्रदायक हैं। वे हमें विद्या देते हैं। वे हमें पढ़ने में लगाते हैं। वे हमारे गुरु हैं और इस

प्रकार से देखें तो वे हमारे महागुरु हैं क्योंकि व्यवहार, आचरण किस प्रकार से करना है यह बात वे ही हमें सिखाते हैं। यदि आप उनको लांघकर या उनसे बढ़चढ़कर बनने का प्रयास करेंगे और दुर्वर्तन करेंगे तो माँ भी आपकी सहायता नहीं करेगी। क्योंकि माँ जानती हैं कि जो लोग गणेशजी से आगे निकलते हैं, वे ऐसे ही लोग हैं जो कभी भी माँ का आदर नहीं करेंगे। इसलिए श्रीगणोजी माता के प्रति आदर का सत्त्वरूप हैं। सारभूत प्रतीक! वे दूसरे किसी देवताओं को नहीं जानते। वे सदाशिव को भी नहीं जानते। दूसरे किसी को भी नहीं जानते। वे केवल माता का ही आदर करते हैं। इसलिए वे एकमात्र हैं जो भक्ति और माता के प्रति पूर्ण शरणागति हैं। इसलिए वे सब देवताओं में सबसे शक्तिसंपन्न देवता हैं और उनकी शक्ति में उन्हें कोई भी पार नहीं कर सकता।

हमें यह समझना चाहिये कि बच्चे जैसे जैसे बढ़ते हैं, वैसे वैसे श्रीगणेशजी भी उनमें बढ़ने शुरू हो जाते हैं। पर मनुष्य प्राणी होने के कारण मनुष्य श्रीगणेशजी पर येन केन प्रकारेण हावी होने का प्रयास कर सकते हैं। इसलिये ऐसे माता-पिता, जो सहजयोगी हैं, उनका कर्तव्य है कि अपने बच्चों का पालन पोषण उन्हें करना है, इस बात का ध्यान उन्हें रखना चाहिये। इस प्रकार से, एक अलिप्तता या लगाव न रखते हुए परिपालन करने के प्रकार से, कि उन बच्चों में श्रीगणेशजी पूर्णतया स्थिर है, यह अभिभावकों को देखना ही है। बालक में श्रीगणेशजी के स्थिर होने का पहला लक्षण है सुज्ञता, विवेकबुद्धि। यदि बच्चा सुज्ञ नहीं है, यदि वह परेशान करनेवाला है, और किस प्रकार आचरण व्यवहार करना है यह बात अगर वह नहीं जानता है, तो ये सारी बातें दिखाती हैं कि उस बालक द्वारा श्रीगणेशजी पर आक्रमण हो रहा है। आधुनिक काल में तो ऐसे ही दिखता है कि बच्चे अत्याधिक मात्रा में आक्रमणग्रस्त हैं।

बालक में कोई भी भय कभी नहीं होता। श्री गणेशजी को कोई भी भय

बिलकुल नहीं। आपको भी बिलकुल ही भय नहीं होना चाहिए। जब तक माँ आपके साथ है तो आपको कोई भी भय क्यों होना चाहिए? इस बात का डर, उस बात का डर! 'मुझे डर लगता है, मैं यह नहीं कर सकता, वह नहीं कर सकता।' यह चीज़ बच्चे कभी नहीं करते। यदि आपने उनसे कहा तो बच्चे हर एक बात करने का प्रयास करेंगे। आपको किसी प्रकार का भय नहीं होना चाहिए। भय क्या होता है। आपके साथ कुछ भी गलत नहीं होगा। पर गलत चीज़े मत कीजिये। अगर आप गलत चीज़ें करेंगे तो वे दूर हटायी जायेंगी। यह शक्ति आप पर भी कार्य करेगी। आप बिलकुल सीधे-सादे, ईमानदार, सरल हो जाईये, कोई भी चीज़ आपका नुकसान नहीं कर सकती। आपके लिये हर एक चीज़ व्यवस्थित रूप से रख दी गयी है। सब कोई आपका खयाल रख रहे हैं। कितनी सारी देवतायें हैं जो आपके लिये काम सुचारु कर रही हैं। यह भय-वय का प्रकार आपमें आना ही नहीं है इसलिये आपको अत्याधिक सावधान रहना है। क्योंकि भय आपको बांयी बाजू में ले जाता है और अगर एक बार आप बांयी ओर चले गये, तो फिर आप तो बांयी बाजू की समस्यायें जानते ही हैं। आप श्रीगणेश की विरोध में जाते हैं। श्रीगणेश बांयी बाजू के तल में स्थित हैं। आप भावभावनाओं में आनंद से उछलते हैं। आनंद ही आपकी मूल भावना है। कृति करते समय आपने निर्विचार होना है। और उत्थान में आपने पूर्णतया समर्पित, शरणागत होना चाहिये। बस, इतना ही तो है। बहुत सरल है यह। बच्चों के लिये तीन मंत्र बहुत ही सरल है।

अबोधिता पर आक्रमण होता है। और लोगों के लिये यह जानना बड़ा कठिन है कि बच्चों का साथ कहाँ तक दे और कितनी दूर तक नहीं जाना है। इस में तरल सीमारेखा कैसी खींचनी है। माता-पिता ने यह समझना बहुत आवश्यक है कि अगर श्रीगणेश सुज्ञता प्रदान करने वाले हैं तो मेरे अन्दर भी सुज्ञता, विवेकबुद्धि होनी चाहिए। यदि मैं सुजान हूँ तो मुझ में संतुलन भी है। तो मैंने बच्चों पर क्रोध नहीं करना है। तब मैंने उन्हें ठीक करने के लिये ऐसा

तरीका और व्यवहार अपनाना चाहिये कि उनकी गलतियाँ ठीक की जाये।

इसके विरुद्ध आप यदि बच्चों के साथ अत्यधिक कठोर हो जाएंगे तो हो सकता है, वे प्रतिक्रिया देंगे और भटक भी जाएंगे। अथवा आप यदि बच्चों के साथ बहुत ही सख्ती से पेश आने का प्रयास करेंगे तो बच्चे भी उसी प्रकार से व्यवहार करेंगे। श्रीगणेशजी के जैसे अपने बच्चों के साथ बात कीजिये और आप की माँ का-श्रीमाताजी का आदर करने उन्हें सिखाईये। आप की माता अर्थात् आपकी परम पूज्य श्रीमाताजी और आप की अपनी माँ! यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है। अगर पिता बच्चे को माँ का आदर करने नहीं लगाता, तब तो बच्चा कभी भी ठीक नहीं हो सकता। इसका कारण यह है कि अधिकार तो नि:संशय पिता की ओर से आते हैं, परंतु माता का आदर करना ही चाहिये। पर उसके लिये पहले यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि माता ने भी पिता का आदर करना चाहिये। इसलिये अगर बच्चों के उपस्थिति में आप एक दूसरे के साथ झगड़ा करना शुरू कर देंगे, या दुराचरण करेंगे या अनुचित व्यवहार करेंगे, तो उसका बच्चे के गणेश तत्त्व पर बुरा असर पड़ेगा। सहजयोग में बच्चों का उचित परिपालन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि ईश्वर की कृपा से ही आप सब को आत्मसाक्षात्कारी सन्तान प्राप्त हुए हैं। इसलिये बच्चों का साथ कहाँ तक देना, किस सीमा तक देना यह जानना आपके लिये आवश्यक है। उन्हें अधिक बुद्धिमान, विवेकशील बनाना है और नीतिमान तथा सदाचरणी भी होना है। पहली बात तो यह है कि आपने उनकी सुज्ञता का संरक्षण, जतन करने का प्रयास करना है। अगर वे कुछ विवेकबुद्धि से भरी बातें कहते हैं तो दाद देनी है। पर उन्होंने अनुचित स्थान पर, या फिर कुछ अशोभन नहीं कहना चाहिये। उनके गलत व्यवहार को भी नहीं सहना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि अंतरंग की जो कुछ भी सुज्ञता है उसका अविष्कार उज्ज्वल, प्रकाशित रूप से बाहर होना चाहिये।

श्रीगणेशजी आपके अन्दर उच्चतर आत्मा को प्रस्थापित करते हैं। नीचे

वाले स्तर पर आपकी जो आत्मा है वह जीवन के निम्नस्तर की वस्तुओं के आनंद का उपभोग लेती है। जैसे यदि आपने मोनालिसा को देखा, मैं नहीं जानती, पर वह अभिनेत्री नहीं हो सकती, वह तो किसी सौन्दर्य प्रतियोगिता के लिये स्पर्धक भी नहीं हो सकती। उसका चेहरा अत्यन्त शान्त है, अत्यधिक माँ के समान। उसकी आँखे अत्यंत निर्मल हैं और क्या इसलिए वह चिरन्तन काल तक इतनी प्रशस्ति पाती है, सब के मन को भाती है? कारण यह है कि मोनालिसा में गणेश तत्त्व है। वह एक माँ है। उसके बारे में एक ऐसी कहानी है कि इस स्त्री ने अपने बच्चे को खो दिया था, उसका बच्चा मर गया था। तब से ना वह कभी भी हँसती ना कभी रोती! एक बार एक छोटासा बच्चा उसके पास लाया गया। उसने बच्चे को देखा। उसके बाद उस बालक के प्रेम से जो वत्सल प्रेम भाव उसमें आया, वह उसका मंद स्मित था। उसीका चित्रण उस महान कलाकार ने किया है। इसी लिये लोगों को वह चित्र पसंद आता है और वे उसकी प्रशंसा करते हैं।

आपने देखा है कि पश्चिमी देशों में माँ-बेटे के रिश्ते में लोगों की खास दिलचस्पी नहीं है। पर आप कहीं भी जाईये 'माँ और बच्चा' यह कलाकृति का सबसे अच्छा विषय माना गया है। वे आपको फोटोग्राफ दिखायेंगे, यह माँ और बच्चा है। यह ख्रिस्त का अवतरण पृथ्वी पर हुआ, तो वहाँ माँ है ही। उन्हे माँ-बच्चे का तत्त्व कार्यरत है यह स्वीकारना ही है अन्यथा उस चित्र को इतना महान नहीं माना जाएगा। या तो फिर आपको साक्षात् ख्रिस्त को ही लेना है और उसे दिखाना है क्योंकि ख्रिस्त स्वयं ही गणेश तत्त्व है। मैंने उन दिनों का ऐसा कोई भी चित्र नहीं देखा जहाँ ये तत्त्व विद्यमान नहीं है। पिकासा ने भी इसका उपयोग किया है। जो लोग पूर्ण रूप से आधुनिक हैं उन्हें भी लोकप्रियता के लिये इस तत्त्व का उपयोग करना पड़ा। पर कुछ लोगों ने गणेश तत्त्व को लोकप्रिय करने के लिये इसका उपयोग नहीं किया किन्तु गणेश-विरोधी तत्त्वों के लिये! ऐसी सब बातें जैसे विरल हवा में उड़ गयी,

अदृश्य हो गयीं। और मैं देखती हूँ कि अब यह सब धीरे-धीरे नीचे-नीचे जा रही हैं।

यह वास्तविकता है कि लोगों ने उनके नीतिनियम खो दिये हैं। तथापि अभी भी उन्हें रेम्ब्राण्ट को पाना अच्छा लगेगा, उन्हें लिओनार्दो-दा-विंची को अपनाना भी पसन्द आएगा। उन्हें ऐसे कलाकारों को स्वीकारना अच्छा लगेगा जिन्होंने माँ-बेटे पर कलाकृति की है। यह बहुत ही आश्चर्य की बात है। अब के बार जब मैं ऑस्ट्रिया गयी तो मैंने पूछा कि, 'आपके पास कौनसी मूर्तिया हैं?' उन्होंने कहा कि, 'हमारे पास तो सुन्दर मेडोना और बालक की मूर्ति है।' माँ-बच्चे का यह तत्त्व मानवजाति के लिये अत्यन्त सुखदायी, सबसे अधिक आनंद देने वाला है। बच्चों को देखना, उनसे मिलना, उनके साथ खेलना, उनके साथ होने का आनंद लेना। क्यों? क्योंकि उसमें बच्चे की मिठास होती है। जब आप बच्चे को देखते हैं तो आपके अन्दर आनंद गुदगुदाता है। चेहरा तत्काल बदल कर अलग सा होता है। मैंने एक फिल्म देखी है जहाँ मगरमच्छ अपने अंडो तोड़ रही है। उस समय उस मगरमच्छ की आँखे आपने देखनी थी। कितनी सावधानी से वह तोड़ रही थी, उसकी आँखें इतनी सुंदर थी, उसकी आँखो से ऐसा प्यार झर रहा था। मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि ये उसी मगरमच्छ की आँखे हैं। और अपने मुँह से वह सब अंडों को हौले-हौले तोड़ रही है और उनमे से छोटे-छोटे मगरमच्च के पिल्ले बाहर आ रहे हैं। बाद में वह उन पिल्लों को किनारे पर लेकर आती है और लाते समय वह उन पिल्लों को अपने मुँह में ही साफ करती है। इतनी सावधानी से, अपने मुँह का उपयोग वह स्नानगृह के समान करती है। आपने यह भी देखना चाहिये कि जानवर भी अपने बच्चों के साथ कैसा बर्ताव करते हैं। पर जब आप जैसे किसी प्रकार से तथाकथित आधुनिक बन जाते हैं, तो आपके कृत्य, हावभाव, क्रियायें बहुत ही मजेदार, हास्यास्पद होती हैं। और ऐसे भी लोग हैं जो बच्चों को मार डालते हैं, ऐसे भी लोग हैं जो बच्चों को

गालियाँ देते हैं, उनसे बदतमीजी करते हैं। यह तो राक्षसों से भी बदतर है। और तो और राक्षसों ने भी ऐसा नहीं किया है, पिशाचों ने भी नहीं किया है। गणों को तो आश्चर्य लगता है कि ये नये प्राणी कितने अजीबो-गरीब हैं, कौनसी किस्म के हैं।

बच्चों के लिये प्रेम पूर्णतः महत्त्वपूर्ण होना आवश्यक है। परंतु सहजयोगी होने के नाते आपको केवल आपके ही बच्चों के लिये लगाव नहीं रहना चाहिये। दूसरी बात यह है कि आपको यह जानना आवश्यक है कि अपने इस प्रेम को आपने सीमित कैसे रखना है। यह सीमा हित करने की इच्छा तथा सुजनता की है। क्या यह मेरे बच्चे के लिये हितकारी है? क्या मैं मेरे बच्चों को बिगाड़ रहा हूँ? मैं मेरे बच्चे को ज्यादा ही प्रोत्साहित कर रहा हूँ? क्या मैं मेरे बच्चे के हाथ का खिलौना बन गया हूँ? या फिर मैं मेरे बच्चे को ठीक से सम्हाल रहा हूँ? व्यवस्थापित कर रहा हूँ? क्योंकि बचपन में माता और पिता को ही बच्चों को ढ़ंग से व्यवस्थित करना पड़ता है। उन्होंने बच्चों को बताना चाहिए कि बच्चों को आज्ञाकारी होना ही है और अपने माता-पिता को ध्यान से सुनना है।

कुछ लोग हमसे आयु में कम हैं, आर्थिक रूप से उतने ठीक नहीं हैं, ज्यादा प्रतिभाशाली या बुद्धिवान नहीं है, या सहजयोग ज्ञान के बारे में अच्छी तरह साधनसंपन्न और तैयार नहीं हैं या कुछ लोग सहजयोग में अभी पुराने, ज्येष्ठ नहीं हैं, हमें उन पर पिता के समान ध्यान देना है या हम कह सकते हैं कि माँ की तरह ध्यान देना है कि वे दूसरों से समान, बराबरी के नहीं हैं तो ठीक है कोई बात नहीं। हमारे पास गणेशतत्त्व है तो इन लोगों के गणेशतत्त्व को प्रेरित, उत्तेजित करना है। गुरुतत्त्व गणेशतत्त्व से पूरी तरह बद्ध है। इसलिये निपुणता, प्रभुता प्राप्त करने के लिया या उच्च तर स्थिति प्राप्त करने के लिये ऐसे लोग हम पर निर्भर हैं, ऐसा उन्हें लगना चाहिये। यदि गुरु के पास गणेशतत्त्व नहीं है तो वह भयंकर व्यक्ति हो जाता है। कोई भी उससे जुड़ना नहीं चाहता या

उसका अनुसरण करना नहीं चाहता और सब कोई उससे दूर भाग जाते हैं। गुरु शिष्यों को दण्डित कर सकता है या हो सकता है कि वह क्रोधित भी हो जाये पर मूलत: गुरु सोचता है, 'यह मेरे लिये मेरी ही विलक्षण वस्तु है। मैं उसका विकास कर रहा हूँ। मैं उसको घटित कर रहा हूँ, बना रहा हूँ।' परंतु आधुनिक विचारधारा में ऐसा सोचते हैं कि उन्हें व्यक्ति ही रहने दीजिये। उन्हें स्वतंत्र रहने दीजिये। माता-पिता अपनी सन्तानों का उस प्रकार परिपालन नहीं करते जिस प्रकार करना चाहिये। जैसे कि, 'देखिये, यह मेरा बेटा है। मेरे पास बुद्धिमत्ता, प्रतिभा है। मैंने उसको अवश्य सिखाना चाहिये। उसने ऊपर उठना ही है। मेरी अपनी आत्मा का, व्यक्तित्व का निरन्तर आगे बढ़ने वाला जो स्रोत है वह मेरा बेटा है।' और प्रत्येक व्यक्ति को केवल व्यक्ति के रूप में ही रखने की, रहने देने की कल्पना ऐसी है, 'तुम एक स्वतंत्र व्यक्ति हो। अठारह वर्ष की आयु में तुम घर से बाहर निकल जाओ। तुम्हें जो करना अच्छा लगता है वो करो। अपने खुद के पैरों पर खड़े हो जाओ।' यह उचित नहीं है। जीवन संपूर्ण से संबद्ध रहता है। जब तक और जहाँ तक आप संपूर्णता से पूर्ण रूप से संबंधित नहीं होते, तब तक आप अबोधिता की सामूहिकता को समझ ही नहीं सकते।

कभी-कभी मैं देखती हूँ कि किसी एक का बच्चा किसी दूसरी व्यक्ति के गोद में मज़े से बैठा है। वह दूसरी व्यक्ति के पास ऐसे आता है कि वह दूसरा व्यक्ति ही उसका पिता हो, आता है और गोद में बैठ जाता है। वह जानता ही नहीं कि वह व्यक्ति उसका पिता नहीं है। पर अभी तक वह बोध उस बालक में नहीं है। इससे 'मेरा' की कल्पना और 'यह मेरा है' ऐसी स्वामित्व की भावना टूट जाती है। और उससे आपको ऐसा भी लगता है कि अब हम एक उपाय हैं, एक उपाय, या हम कह सकते हैं कि एक साधन, उपकरण हैं जिसके माध्यम से हम सर्वदूर गणेशतत्त्व को अभिव्यक्त करते हैं और वह गणेशतत्त्व है चैतन्य की लहरें। ये वहीं चैतन्य लहरें हैं जिनके लिये आप पूछ रहे थे, जिन्हें आप

मांग रहे थे। ये चैतन्य लहरें और कुछ नहीं, यह तो गणेशतत्त्व है, ओंकार है और माँ-बेटे के बीच में जो प्रेम होता है उस वात्सल्य की भावना है। यह भावना, संवेदना वही है जो माँ और बच्चों के बीच में बहनेवाले चैतन्य के स्पन्दन हैं। उन दोनों के मध्य में जो अन्तर है, दूरी है वह चैतन्य ही है। तो इसलिये यही भावना होनी चाहिये कि यह तो अभी बच्चा ही है। और वहाँ माँ भी है जो उसका परिपालन कर रही है। बच्चे को सारी शक्तियाँ दे रही है। प्रेम से उसका संवर्धन कर रही है। उस बच्चे की मर्यादाओं को, सीमाओं को समझ रही है, इन सब चीज़ों पर ध्यान दे रही है। बच्चे की विवेकबुद्धि, सुज्ञता, और मधुरता का गुणग्रहण कर रही है। और ये सब क्या है? ये ही चैतन्य लहरें हैं।

आपको अपने बच्चों को उचित, सुज्ञ, विवेकशील नैतिकता का मार्गदर्शन करना है। उसके लिए आपने स्वयं उचित आचरण करना आवश्यक है। आपके बच्चों की उपस्थिति में आपने रूमानी नहीं होता है। टेलिविजन, उस पर दिखाई जानेवाली बातें, बच्चे जो देखते हैं वह सब कुछ इसके बारे में आपने सचेत रहना चाहिये। आपको सावधान रहना चाहिये और बच्चों को बोलना चाहिये कि यह गलत है और इससे हमें समस्यायें लायी जाएंगी। अगर आपका बच्चों के साथ उचित, सहज संपर्क-संवाद है, तो आपको कोई समस्या नहीं आयेगी। इस प्रकार की शिक्षा उनके पास बहुत ही है। ऐसा होते हुए भी आपको बच्चों के साथ कितनी सारी समस्यायें हैं। यदि बच्चों को अबोध, निष्कपट रहने दिया गया, तो इन सारी बातों में वे कभी भी उलझते नहीं। मुझे तो बच्चों के कुतूहल से निर्मित कोई भी समस्यायें आती ही नहीं। उन्हें कभी भी उत्सुक, व्यर्थ कुतूहल से युक्त मत बनाईये। उससे आप भी सुखी होंगे, बच्चों को भी आनन्द आयेगा और बिलकुल शुरुवात से ही बच्चे अपना जीवन नैतिकता के मूल आधार पर आरंभ करेंगे। आपको बच्चों को यहीं देना है-एक समुचित नैतिक संवेदना-अनुबोध!

अध्याय २

जन्मजात आत्मसाक्षात्कारी बालकों का विकास

अपनी सन्तानों का परिपालन, संगोपन करना यह हमारे लिये बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है क्योंकि सहजयोग की विवाहविधि से जिनका विवाह संपन्न हुआ है ऐसे व्यक्तियों में अधिकतर व्यक्तियों की सन्तानें साक्षात्कारी आत्मायें हैं। इसका मतलब यह है कि ये सब अति उच्च कोटि के बालक हैं। इसलिये इनका संवर्धन तथा प्रतिपालन बहुत ही ध्यान से, सावधानी से और समझबूझ के साथ किया जाना है। पहली बात तो यह है कि, इन बच्चों की बहुत सारी समस्यायें ही नहीं होंगी। पर धीरे-धीरे समस्यायें आ सकती हैं, बढ़ भी सकती हैं। क्योंकि जब वे समाज के संपर्क में आयेंगे तो उन्हें अलग-अलग प्रकार की पकड़ों का अनुभव आने लगेगा और इन बाधाओं को व्यक्त करना वे शुरू कर देंगे। अधिकतर दाहिनी बाजू का स्वाधिष्ठान कमजोर है क्योंकि बच्चे अत्यधिक क्रियाशील होते हैं। आराम से शान्ति से कैसे रहना, वे नहीं जानते। इतना ही नहीं जब वे ध्यान करते हैं, तो बिलकुल बेचैन, अस्वस्थ रहते हैं। तो जीवन में क्या समस्या है, उसे खोज निकालिये। बच्चों के लिये माता-पिता तथा अध्यापकों का आचरण, व्यवहार बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। आपने जोर से चिल्लाना, चीखना नहीं चाहिये, जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये और बच्चों के सामने क्रोध भी नहीं करना चाहिये। तब कहीं बच्चा थोड़ा बहुत शांत हो जाता है। अगर वह एक शांत बच्चा नहीं है, तो समझ लीजिये आप में ही कुछ गलती, दोष है। निश्चित रूप से ही यह दोष अभिभावकों में है। हो सकता है नाभि में हो, या तो स्वाधिष्ठान पर क्योंकि बच्चा सारे समय बेचैन है। अब तो परिवेश या आसपास भी बहुत ही मात्रा में अस्वस्थता, क्षोभ है। लोगों का अपने क्रोध पर, स्वभाव पर नियंत्रण नहीं है। ये दोनों जब मिल कर एकत्रित

हो जाते हैं तो रास्तों पर भटकने वाले स्वेच्छाचारी लोगों जैसा व्यवहार करने लगते हैं। और जब वे अपना ऐसा चाल-चलन दिखाने लगते हैं, तो वह सब इतना भयंकर होता है कि समझ में ही नहीं आ सकता कि वे इतने क्यों बिखर गये हैं। जानवरों के झुंडों में भी ऐसा कभी नहीं होता। सुसंस्कृत, सभ्य, अच्छी खासी वेशभूषावाले लोग! और न जाने उन्हें अचानक क्या हो जाता है कि उनका क्रोध चरम सीमा पर पहुँच जाता है। एक खेल में जैसे ही एक गोल किया गया, तो उनको गुस्सा आने लगा। वे खेल खेलने वाले लोगों में इतने एकरस, एकरूप हो गये थे, खिलाड़ियों की जगह स्वयं के होने की कल्पना कर रहे थे। इस कारण कि वे खिलाड़ियों से एकरूप हो जाते हैं, तो उनका अहंकार भी उस विशेष समुदाय से एकरूप हो जाता है। वे इतने क्षुब्ध हो जाते हैं, किसी को मारने के लिये उतारू हो कर इधर-उधर दौड़ने लगते हैं और चीज़ें फेंकना शुरू कर देते हैं। फिर पुलिस आगे आती है। जैसे ही पुलिस आती है तो उनसे डरने के बजाय, या अपने आपको नियंत्रित करने के बजाय, वे पुन: क्रोध के आवेश में आते हैं।

इस सब के लिये पहले मैं तो उनके माता-पिता को ही दोष देने के लिये शुरुवात करूंगी। क्योंकि बच्चों को उचित मार्ग से व्यवहार करने या सिखाने के लिये अभिभावक ही समर्थ नहीं रहे। बचपन में ही बच्चा यदि इतना बेचैन, क्षुब्ध रहता है तो बच्चे में यहीं बात उसके व्यक्तित्व के अंदर पक्की बनकर स्थिर हो जाती है। यही कारण है कि वे इतनी विचित्रता से व्यवहार करते हैं कि उस क्रीडास्पर्धा में उन्होंने उसी स्थान पर चालीस लोगों को मौत के घाट उतार दिया। वहाँ न लड़ाई है न झगड़ा। कुछ भी नहीं। केवल क्रोध! और यह क्रोध के उत्पन्न होने के अनेक भिन्न-भिन्न कारण होते हैं। उन सब कारणों को समझने का प्रयास हमने करना चाहिये। इतना क्रोध क्यों? क्या कारण है? हम लोग शान्त प्रकृति के क्यों नहीं? वह क्या है जो हमें क्षुब्ध और क्रुद्ध कर देता है? सीधी बात है-यह अहंकार है। परंतु अहंकार से अभिभूत होने पर भी

समझना चाहिये कि वह इतना वश में नहीं लाया जा सकता कि हमारा सचेतन मन भी उस पर नियंत्रण नहीं कर पा रहा है। बच्चे क्या कर रहे हैं इस बात का उनके बचपन से ही हमने निरीक्षण करना है, समझ लेना है। आज्ञा आपकी पकड़ी जाती है और सहना पड़ता है बिचारे बच्चों को! प्रौढ व्यक्तियों का आचरण यह सबसे महत्त्वपूर्ण बात है। कहीं पर बैठे रहने वाले साधुबाबाओं जैसे लोग आप बिलकुल नहीं है। आपको सामान्य लोगों के जैसे ही होना है। अतिविक्षिप्तता से प्रेरित लोगों की सन्तानें भी वैसी ही होंगी। भले ही तथ्य यह है कि वे साक्षात्कारी आत्मायें हैं। वे छोटे, क्षुद्र नहीं है। वे अपने आप सब ठीक ठाक व्यवस्थित कर सकते हैं और फिर आपको सदैव संतोष दे सकते हैं।

बच्चों को दूसरों से दुर्व्यवहार कभी मत करने दीजिये। जैसे कि उनके बाल खींचना या ऐसीही अनुचित, विचित्र बातें! आपने अवश्य कहना चाहिये, 'बिलकुल नहीं। इस तरह से नहीं करना है।' बच्चों से व्यवहार करने का एक तरीका होता है जिससे आप अपने बच्चों को अच्छे और मधुर बनाते हो। बच्चों से व्यवहार करना कठिन नहीं है। यह तो बहुत सरल बात है। आपको केवल इतना ही समझ लेना जरूरी है कि उनकी क्या समस्या है, हम उनके सामने कौनसी समस्यायें खड़ी कर रहे हैं और कौनसी बात उन्हें परेशान कर रही है। मैं आपको एक नन्ही सी लड़की के बारे में बताती हूँ। जब मैं पहली बार उसे देखने गयी तो वह लगातार सारा समय रो रही थी। फिर मैंने खोज की तब जान गयी कि उसका बिछौना ही रोने का कारण था। उस बिछौने में कुछ गलती थी, गड़बड़ी थी। और जैसे ही हमने बिस्तर को हटा दिया वैसे ही बच्ची ठीक हो गयी। तो शुरू में ही आपको खोजना जरूरी है कि बच्चे को किस चीज़ से तकलीफ हो रही है। उसे आराम से, सुख से रहने और जीवन का आनंद यथायोग्य लूटने दीजिये।

अध्याय ३

उदारता को प्रोत्साहन

उदार होने के लिये बच्चों को सदैव सिखाईये। अगर घर की कोई चीज़ बच्चे दे देते हैं तो आपने उनकी उदारता की प्रशंसा करनी चाहिये। यदि कोई हीरा भी दूसरे व्यक्ति को दिया गया, या किसी बच्चे को, या आपके ही बच्चे को दिया गया, तो भी प्रशंसनीय है। यह बात अलग है कि माँ उस हीरे को लौटा दे। पर हम बच्चे की प्रशंसा करेंगे। 'ठीक है, आपने बहुत अच्छा किया, कि दे दिया।' दान करना एक बहुत बड़ा गुण है। जो बच्चे अपने खिलौने बिलकुल सहजता से दे देते हैं, वे अधिक अच्छे बच्चे हैं। और जो बच्चे अपने खिलौने देते नहीं, अपने खिलौने अपने ही पास रखते हैं, वे अच्छे बच्चे नहीं हैं। हमने सदैव उनकी चैतन्य लहरों पर अवश्य ध्यान देना है। जब तक और जहाँ तक हम उनकी चैतन्य लहरों को नहीं देखते, तब तक हम नहीं जान पायेंगे कि वे क्या करने वाले हैं।

और फिर एक बात और भी है, दूसरों के गुणों को जानना, उनकी प्रशंसा करना। अगर बच्चे दूसरों पर टीका-टिप्पणी करते हैं, उनके दोष निकालना शुरू करते हैं तो उस बात को सुनना ही नहीं, ध्यान भी नहीं देना। जब वे दूसरों के गुण जानते हैं और उसके संबंध में बोलते हैं तो उनकी बातें गौर से सुनिये। यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वे दूसरों पर टीका ही करेंगे, उनके दोष ही निकालेंगे। तब कभी भी किसी एक का पक्ष लेने का विकल्प स्वीकारने का प्रयास मत कीजिये। अगर वे झगड़ा कर रहे हैं तो झगड़ने दीजिये उन्हें! उन्हें थोड़ासा झगड़ने भी दीजिये। कोई खास बात नहीं। उनकी समस्याओं को सुलझाईये। पर यदि वे बहुत ही लड़ रहे हैं, तो दो डंडे लेकर आईये। 'ठीक है, आपको दो डंडों की जरूरत है। एक दूसरे की पिटाई करो।' तब उनको

आकलन होगा कि झगड़ना एक भयंकर बात है। उनको दो लाठियाँ दीजिये और कहिये, 'तुम्हें यह चाहिये ना? ठीक है, ले लो। एक दूसरे की बढ़िया पिटाई करो। जब तुम दोनों बढ़िया घाव पाकर जख्मी होंगे तब हम तुम्हें अस्पताल ले जाएंगे। अब आओ भी ना, ले लो लाठियाँ!'

बच्चे क्यों झगड़ा कर रहे हैं यह बात भी जानना आपको बहुत जरूरी है। दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना यह बच्चों का एक मानसशास्त्रीय तथ्य है। मान लीजिये कि कोई बच्चा अभद्र शब्दों का, गालियों का प्रयोग कर रहा है, तो उसे कहिये, 'ऐसा मत बोलो। मैं तुम्हें इसके लिये थप्पड़ दूंगा।' वह फिर से वहीं बात बोलेगा। पर जब वह ऐसे बोलता है तो आप भूल जाईये उस चीज़ को। यह कुछ भी नहीं है। बच्चा भी भूल जायेगा। बच्चों की संपूर्ण मनोवृत्ति यह होती है कि आपका अवधान कैसे आकर्षित किया जाये। हो सकता है यह उनके स्वभाव की मिठास हो या और जो कुछ भी हो। पर जब उन्होंने कुछ अच्छा काम किया और उस पर आपने पूरा ध्यान दिया, तो बच्चे अच्छे काम करना शुरू करते हैं।

इस प्रकार से प्यार दोनों ओर से कार्य करता है। यह दैवी, ईश्वरीय प्रेम है। हमें अपने आपको अभिव्यक्त करना है। परन्तु बच्चों को बताया जाना आवश्यक है कि वे एक दूसरों से प्यार कैसा करते हैं और वे क्या उपहार देते हैं। उन्होंने छोटे-छोटे उपहार लेने हैं और देने हैं। बच्चे जब जानते हैं कि यह सब कैसे करना है, तो बहुत मीठा लगता है। उन्होंने एक दूसरे से कहना है, 'मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ।' ऐसी बातें कहना बहुत मधुर होगा। बहुत आनंद देने वाली। यहाँ तो बच्चा वह सब कैसे करना है यह बात जानता ही नहीं क्योंकि उसने यह सब किसी के साथ किया ही नहीं। यह कहना अच्छा है, 'इसमें गलत क्या है?' पर कभी-कभी यह बात अहंकार में बसी रहती है। इस पर ध्यान दीजिये। ऐसा कहने पर अहंकार बढ़ता नहीं। तो यहीं है जो कुछ है।

अध्याय ४

आत्मसम्मान

शिक्षा के मूल में यह कल्पना है कि बच्चों के मन में धीरे-धीरे आत्मसम्मान ढालते जाना, आत्मसम्मान क्या होता है यह उन्हें सिखाना और आत्मसम्मान को कैसे समझना। इसी धारा के अनुसार उन्हें अनेकानेक तथा भिन्न-भिन्न चीज़ें सिखायी जाएंगी। जैसे 'अपनी चीज़े उचित प्रकार से रखना, वह जगह साफसुथरी रखना और इसका आदर करना ये चीज़ें हमें अवश्य सीखनी ही चाहिये। उसके साथ यह भी कि विद्यालय, अध्यापक और वहाँ होने वाली सारी चीज़ों का भी सम्मान करना हमें सीखना चाहिये।

यहाँ से प्रारंभ कीजिये कि धरती माता का किस प्रकार आदर करना है। पहले आपने भूमि को आदर से स्पर्श कर उनसे क्षमायाचना करनी चाहिये क्योंकि आप उन्हें अपने पैरों से छूते हैं। एक बार आत्मसम्मान आ गया कि उन बच्चों में दूसरी कोई भी कल्पना धीरे-धीरे निहित करना सहज सरल है। हम उन्हें नियम और शर्तों से पूर्ण रूप से मुक्त करने वाले नहीं हैं। या फिर हम ऐसा भी कहने वाले नहीं है कि नियमों का पालन नहीं होने वाला है। नियम/बंधन इस मार्ग से होंगे कि जिससे बच्चे कुछ असामान्य गुणों से युक्त हो कि जिनकी आज की दुनिया में आवश्यकता है। ऐसी संभावना है कि भविष्य में वे बहुत बड़े नेता बनेंगे, वक्त बनेंगे या फिर वे कलाकार या चित्रकार के रूप में उभर कर आएंगे। वह भी उनकी स्वाभाविक योग्यता या प्रवृत्ति के अनुसार! और इन प्रवृत्तियों का संवर्धन हम करेंगे। पर प्रारंभ में सर्वप्रथम बात यह है कि आत्मसम्मान कैसे करना है यह जानना व्यक्ति के लिये आवश्य है।

मान लीजिये कि आप उन्हें चालीस वर्षों की आयु में आत्मसम्मान सिखाना प्रारंभ करेंगे, तो आप नहीं कर सकेंगे। दस वर्षों की आयु में भी, आप नहीं कर सकेंगे। यह चीज़ दो से छह वर्षों की आयु में ही करनी है। इसी उम्र में वे आत्मसम्मान का भाव उत्पन्न होने के बाद उसे बढ़ा सकते हैं। स्वच्छता का भाव, व्यवस्थित होने का ज्ञान, अनुशासन का बोध इन सबको बढ़ा सकते हैं। दो से छ: वर्षों तक का समय बिलकुल योग्य समय है। संस्कृत में कहा गया है 'नवे भाजने अग्निसंस्कार:'। यह वहीं समय है कि जब घडा बनाया जा रहा है पर अभी पकाने का समय नहीं आया है। हम उसे बाद में भट्टी में पकाने के लिये रखते हैं।

इसके पूर्वकाल में आप बच्चों पर जो भी संस्कार करते हैं, वह उसी रूप में बच्चे में रह जाएंगे। पर बात यह है कि सबसे पहले घड़ा बनाया जाता है। वह तब तक नहीं जब तक दो वर्ष नहीं होते। दो से छह वर्ष, यह उन्हें पकाने का, अग्निसंस्कार करने का समय है। पर आग में डालने से पहले आप उन पर सारे संस्कार, छाप डालिये। उसके बाद में उनको भुंजिये। यह सब ऐसा है। बच्चे का अच्छा बालक बनाना सृजनात्मक, नवनिर्माण के समान लगता है। सबसे महान कलाकृति बनानी है तो वह मनुष्य ही है। ईश्वर ने भी सबसे महान कृति अर्थात् मनुष्य को ही बनाया है। और मनुष्यमात्र को और अधिक महान् कृति बनाना ये हुई न कोई खास बात!

इस आयु में आप उनकी अलग-अलग प्रतिभायें या प्रवृत्तियां भी खोज सकते हैं। बालक की रुचि जिस बात में है उसे आप सरलता से खोज सकते हैं। उनमें जो प्रतिभा, कुशलतायें हैं उनको इसी आयु में खोज कर प्रारंभ से ही बच्चों को प्रोत्साहित करना चाहिये। पर कुछ भी हो प्रत्येक बच्चे पर प्रत्येक चीज़ की जबरदस्ती नहीं करनी है। कुछ बच्चे गणित में बहुत अच्छे होते हैं, पर कुछ बच्चे कमजोर होते हैं। पर ऐसा व्यक्ति हस्तकला में कुशल है, तो उसे हस्तकला करने दीजिये।

प्रत्येक प्रकार का ज्ञान समान स्तर, समान मूल्य का ही होता है। ऐसा कुछ भी नहीं कि यह ज्ञान अधिक ऊँचा है, वह ज्ञान उच्चतर है। क्योंकि कैसे भी हो, यह सब अविद्या है। आपको केवल तकनीक तंत्र जानना है कि आपके मन में आपको जो निर्माण करना है ऐसा लगता है, उसे किस प्रकार निर्माण किया जाये। जब आप सीख रहे हैं तो अधिक ऊँचा या अधिक नीचा ऐसा कुछ भी नहीं। बच्चे को जो पसन्द है, वही उसे करने दीजिये। उसे अपने आप व्यवस्थापन करने दीजिये। इस प्रकार से प्रत्येक वस्तु, मंजिल पायी जा सकती है। जैसे कि कुछ बच्चों को कमरे साफ करना अच्छा लगता है, किसी को सारी चीज़ें साफसुथरी रखना, खाना बनाना पसन्द है। ठीक है, वे होटल मैनेजर बन सकते हैं। बच्चों की अपनी अपनी मनोवृत्ति या किसी चीज़ की ओर झुकाव होता है।

अध्याय ५

बालकों को प्रतिष्ठा प्रदान कीजिये

बच्चों को सारे समय पीटते रहने से, उनमें एक ऐसा व्यक्तित्व आ जाता है कि जिसके अन्दर कुछ ठोस, वास्तविक सार वत्ता ही नहीं। उत्तर काल में वह एक बहुत ही अहंकारी, धृष्ट व्यक्ति बनने की सम्भावना है। वह अपने माता-पिता से संकेत लेकर, उनका छोर पकड़ कर ही चलेगा और उसका व्यवहार भी वैसे ही होगा। पर उसकी अपनी प्रतिष्ठा, कोई तेज़ नहीं होगा। वह प्रतिष्ठा कि जो मौन होती है पर केवल आविष्कृत होती है, अभिव्यक्त होते रहती है। प्रतिष्ठा मौन होनी चाहिये, जो केवल प्रकट होती है। जब लोग ऐसे उन्नत, ऊँचे व्यक्ति को देखते हैं, तो कहते हैं, 'वाह, क्या आदमी है। क्या प्रतिष्ठा है।' और फिर ऐसे लोग समाज के लिये आदर्श बन जाते हैं।

ऐसे बच्चों को आप कहीं भी रखिये। वे इतने प्रतिष्ठित और परिपक्व होंगे कि लोग अचंभा करेंगे। ऐसे बालकों को कुछ भी बताने की आपको जरूरत नहीं। अगर आप अपना घर बहुत ही साफसुथरा रखते हैं। और इस बात का हमेशा ध्यान रखते हैं तो बच्चे स्वयं घर की साफसफाई करेंगे उन्हें यह सब करना पसन्द आयेगा। क्योंकि छोटे बच्चे सुंदरता की खिलती कलियाँ होते हैं। जब उन्हें हम काटते छाँटते हैं, तो बिलकुल जड़ से ही। जब बालक प्रतिष्ठित, गौरवयुक्त होते हैं, तब वे बिगाड़े जा रहे हैं, ऐसा मैंने कभी भी देखा नहीं।

अध्याय ६

प्राकृतिक गुणविशेष

एक छोटासा बच्चा इतने थोड़ेसे समय में जितने सारे शब्द सीखता है, याद करता है, उतने तो हम भी नहीं सीख सकते। बाद में आप जब बड़े हो जाते हैं, तो आपको अगर केवल तीन वाक्य भी सीख कर याद करने होते हैं, तो वह असंभव है। बालक बढ़ते जाता है और उसका कुतूहल और अधिकाधिक बातें जानने की उसकी क्षमता अत्यंत तीव्र होती है और वह अधिक सीखना शुरू कर देता है। वह नहीं सोचता कि वह सब कुछ, हर एक बात जानता है। जो ऐसा सोचते हैं उनका अभी तक योग्य रूप से जन्म ही नहीं हुआ है। मैं कुछ भी नहीं जानता, वह मुझे जानना ही है। हमें विनयशील, नम्र होना है और हमें बहुत सारा जानना है। और हमें मालूम होना चाहिये कि जहाँ कहाँ से हो, हमें यह जानना ही है।

हम बहुत कुछ जानते हैं, ऐसा गर्व करना बढ़ने में, उन्नति में, खतरनाक है। तो इस दर्प को छोड़ ही देना चाहिये। हमने यह जानना चाहिये कि हम कुछ भी नहीं करते। एक छोटासा बच्चा भी एक मूर्ख व्यक्ति नहीं होता। वह कुछ भी मूर्खता से कभी भी नहीं करता। उलटा, अगर कोई मूर्खता कर रहा है, तो बच्चे कहते हैं, 'ये तो विदूषक है।' उन्हें वह बात अच्छी नहीं लगती। वे आश्चर्य करते हैं कि इस आदमी को क्या हो गया है!

बालक को अस्त-व्यस्त और बिखरे बाल रखना अच्छा नहीं लगता। एक बच्चा नहाने गया था और नहा कर वापिस लौट रहा था। उसके पिता की इच्छा थी कि उसे मेरा दर्शन करने ले आयें। बच्चा बोला, 'नहीं मेरे कपड़े ठीक-ठाक नहीं। मेरे बाल पूरे बिखरे हुए हैं। मैं ऐसे में माँ के दर्शन कैसे कर

सकता हूँ?' फिर वह वापिस गया। अपने बालों में ठीक से तेल डाला। उसने करीने से कपड़े भी पहने।

जब हम छोटे थे तो हम हमेशा जानते थे कि पश्चिमी देशों के सब लोग सुव्यवस्थित वेशभूषा करते थे। क्योंकि उसी प्रकार उन्हें संस्कारित, शिक्षित किया गया है। वे कभी भी बिखरे बाल लेकर नहीं आते हैं। परंतु उस बच्चे ने कहा, 'नहीं, मेरे बाल बिखरे हुए हैं। मैं माँ से मिलने कैसे जा सकता हूँ?' इसलिये हमें फैशन की सारी चित्रविचित्र कल्पनायें छोड़ देनी चाहिये। क्योंकि यह सब चला जाएगा। आपके बाल झडेंगे। आप सब गंजे बन जाएंगे। और खूब मज़ेदार, विचित्र दिखेंगे। इसमें कोई भी सयानापन नहीं। पर एक बच्चे के पास बुद्धिमानी, विवेक होता है। तो वह ऐसे वैसे नहीं आएगा। उसने ठीक तरीके से कपड़े पहने। उसके बाद वह आया और मेरे सामने खड़ा हो गया। यहीं बात है जो हमें समझनी चाहिये कि हमारा बाह्य रूप हमारी अन्तरात्मा को प्रकट करता है। हमें कुछ-कुछ चीज़ें करनी पड़ती हैं। क्योंकि चीज़ों का स्वीकार कैसे करना है, यह हम नहीं जानते; बच्चा कोई भी चीज़ जैसे करता है, उसी प्रकार से करना हम नहीं जानते। अगर आपने बच्चे से कुछ कहा तो वह ध्यानपूर्वक सुनता है और आज्ञा पालन भी करता है। अगर ऐसा नहीं है तो वह बच्चा अन्य बच्चों जैसा सर्वसामान्य बच्चा नहीं है। पर आपको अपने बच्चों के साथ बहुत अधिक सावधानी बरतनी है। आपने उन्हें बालों में जुएं रखने वाले, विचित्र-अव्यवस्थित वेष धारण करने वाले, लोटस ईटर्स के समान मंद, अनुत्सुक नहीं होने देना चाहिये। या तो उन लोगों, जैसे जिनमें कुछ भी चटपटापन नहीं है, ऐसे भी नहीं होने देना चाहिये। वे सब सहजयोगी है और आपको उसी मार्ग से वैसे ही बनना है।

बालक का दूसरा एक गुणविशेष यह है कि प्रत्येक वस्तु के सारतत्व का ही वह लक्ष्यवेध करता है। बच्चा प्रत्येक वस्तु के सारभूत तत्व को ही देखता

है। कभी-कभी बच्चे सवाल भी ऐसे पूछते हैं जो विशेष रूप से सामूहिक होते हैं। मुझे तो आश्चर्य लगता है कि उन्हें इस प्रकार का ज्ञान कैसे प्राप्त हुआ और वहाँ तक वे पहुँचे भी कैसे! फालतु बातों में और फालतु बातों के बारे में बोलने में वे अपना समय नहीं गंवाते। अपने कपड़े, अपने घर, ऐसी चीज़ों के बारे में बातें करते हुए मैंने बच्चों को कभी नहीं देखा है। वे तो कुछ रचनात्मक कार्य में व्यस्त रहते हैं। आप उनसे पूछते हैं, 'तुम क्या कर रहे हो?' 'देखिये, हम सारा का सारा हवाई अड्डा या पूरी बंबई को बाँध रहे हैं।' उनका देखने का तरीका इस प्रकार का है। वे तो कामधाम में बहुत ही व्यस्त लोग होते हैं। जो साक्षात्कारी आत्मायें अभी बालक हैं उन्हें यदि आप देखते हैं तो वे सदा सामूहिकता के लिये चिन्तितत दिखेंगे। अगर किसी बच्चे से कहा, 'तुम एक सहजयोगी हो।' तो बच्चे कहेंगे, 'हाँ, तो मैं सहजयोगी हूँ। मैं उस चीज़ को नहीं कर सकता।'

उनका अहंकार बढ़ने के बाद ही सारी निरर्थकता शुरू हो जाती है और वे बहुत ही विचित्रता से व्यवहार करने लगते हैं। भगवान जो देते हैं उसी को बच्चे सहज स्वीकार कर लेते हैं। उनके लिये सावधानता बहुत ही स्वाभाविक है। अगर उन्होंने कोई हवाई जहाज जाते हुए देख लिया तो कहेंगे, 'बाय, बाय हवाई जहाज!' फिर वे नौकाओं को भी जाते हुए देखते हैं तो कहते हैं, 'बाय, बाय!' और समंदर को वे कहेंगे, 'तो ठीक है सागरजी!' हम कल आएंगे और आपसे मिलेंगे।' आप देखिये, हर एक चीज़ उनके मन के अन्दर होती है। उनके लिये तो वहाँ हर एक चीज़ है ही। आप उनसे पूछते हैं, 'यह आपको अच्छा लगा? कैसे?' 'ओह, हमें घास खूब अच्छी लगी। वह बहुत सुंदर है।' और वे आपको हर एक चीज़ बतायेंगे, हर एक चीज़ की बारीकियाँ भी विस्तार से बतायेंगे। इतने सावधान और तत्पर। उसके बाद वे कहेंगे, 'ओह, आपने यह क्यों नहीं किया? आप यहाँ कुछ फूल रख सकते थे। आप कुछ फूलपत्तियाँ, छोटासा बगीचा बना सकते थे। इस झोपड़ी के साथ वह सुंदर

दिखता!' और ऐसा ही कुछ, या तो वे कोई सुझाव देंगे।

बच्चा बहुत ज़्यादा नहीं सोचता। वह योजना भी बहुत नहीं बनाता। वह तो हर एक चीज़ से कुछ मजे लेना चाहता है। बच्चों के स्नायु अत्यंत कोमल, लचीले होते हैं। उसके अनुसार वे हमेशा प्रतिक्रिया देते रहते हैं। वे कभी सुखी होते हैं तो कभी दुखी, पर स्नायु तो सदा के लिये होते हैं, और भावनाओं के अनुसार वे उस प्रकार कार्य करते हैं। कोई भी तनावग्रस्त नहीं होता। यही कारण है कि हम बड़ों के लिये अपने चेहरों से समस्यायें हैं। क्योंकि हम हमारे चेहरों को विशिष्ट मुद्रा में, किसी खास ढ़ंग से रखते हैं। आज कल तो आप जितने अधिक उदास होंगे, उतने ही अधिक सुंदर आप समझे जाएंगे। तो हो गया काम खतम! नहीं तो कभी-कभी लोग इस तरह हमेशा मुस्कुराते रहते हैं। यह बहुत बुरी बात है। या तो हमेशा बिलकुल दुखी लगते हैं। आपने अपने मन की भावनाओं, क्रियाओं को चेहरे पर व्यक्त, प्रकट होने देना चाहिये। ऐसे व्यक्तित्व का उपयोग ही क्या है जो अपनी भावनाओं को प्रदर्शित करना जानता ही नहीं? आप पत्थर तो नहीं है! हैं क्या? हमने मुस्कुराना चाहिये। हमने स्वाभाविक रूप से हंसना चाहिये। और हमने लोगों से बातचीत भी स्वाभाविक रूप से करनी है।

अध्याय ७

अनुशासन

प्रारंभ में ही, मैं आपसे कहूंगी कि अनुशासन के नाम पर बच्चों पर अत्यधिक बंधन डालना मैं नहीं चाहती। क्योंकि बच्चे अपने आप ही बहुत अनुशासित होते हैं। पर फिर भी अनुशासन तो होना ही है। यदि आप सुबह जल्दी उठने का अभ्यास करेंगे तो धीरे-धीरे आप के ध्यान में आयेगा कि बच्चे भी उस समय के बाद सो नहीं सकते। ये सब अच्छी आदतें लगायी जा सकती है। जैसे जल्दी सो जाना, सुबह जल्दी से उठना, बहुत ज़्यादा नहीं बोलना, या तो फिर पूरी तरह गूंगे या बहरे हो जाना, गंदी बातें नहीं करना, टुच्चेपन नहीं होना या कटु, तीक्ष्ण, व्यंगभरी बातें करना। इन सारी बातों को ध्यान तथा सावधानी से देखा जा सकता है।

बच्चों को यह बात जानना आवश्यक है कि उनका व्यवहार कैसा होना चाहिये, प्रश्नों के उत्तर कैसे देने हैं, और उन्होंने कितना बोलना चाहिये। उनको उपहार देकर मत बिगाड़िये। उचित समय पर ही उन्हें उपहार दीजिये और उनका आचरण कैसा हो, यह बात उन्हें बताईये। उनको अनुशासित करना आपका कर्तव्य है। किसी भी बच्चे को उलटा जवाब देने की अनुमति मत दीजिये। सम्मानकारी, आदरशील होने के लिये उन्हें सिखाईये। यदि आपने उन्हें यह सिखाया नहीं तो वे दूसरों का अनादर करेंगे। एक घंटा उनके साथ बैठिये और उनसे बातें कीजिये, पर दूसरों की उपस्थिति में नहीं। उन्हें बताईये, 'आप तो राजा लोग, रानियाँ हो।' उनमें आत्मसम्मान भर दीजिये तब वे उचित वर्तन करेंगे और उसके लिये कैसे प्रयास करना है, यह भी सीखेंगे।

बच्चे अगर खिलौने तोड़ देते हैं या ऐसा ही सब कुछ करते हैं, तो उनको

बताईये, 'अगर तुम खिलौने तोड़ रहे हो तो तुम्हें फिर से नहीं मिलने वाले। खिलौने ठीक तरह से रखो। अच्छी तरह से संवार कर क्रमसे रखो।' उन्हें ही यह सब कैसे रचना है, इस पर विचार करने दीजिये। मिल कर करने दीजिये। इस प्रकार से आप उन्हें प्रशिक्षित कर रहे हैं। उन्हें थोड़ेसे ही खिलौने दीजिये, पर खिलौने कहाँ हैं यह मालूम कर लीजिये। उनको खिलौनों की सूची दीजिये। और समझने के लिये उन्हें सूची को रखने के लिये कहिये। उससे खिलौनों के प्रति आदर कैसा करें यह वो समझता है। आदर या सम्मान यहीं तो वह खास बात है। हमारी अपनी जो चीज़ें होती हैं, उनका हम आदर नहीं करते। हम केवल उनका लाड़-प्यार करते हैं। हम हमारे कपड़े इधर-उधर फेंक देते हैं। यहीं कारण है कि बच्चों में अनुशासन नहीं है। वे उनके सारे कपड़े यहाँ फेंक देंगे, बिलकुल अस्तव्यस्त, अव्यस्थित।

बच्चों को यह दूसरी आदत लगनी ही चाहिये कि वे सुबह जल्दी उठे और हाथ-मुंह धोयें। उन्हें नहलाइये और तैयार कीजिये। बच्चों को चाय मत दीजिये, पर दूध देना है। चाय की आदत अच्छी नहीं है। आपके अपने बच्चे जब तक सोलह वर्ष के नहीं होते, तब तक आपने उन्हें हर एक चीज़ बताना जरूरी है। चीज़ें, जो अच्छी है, सद्व्यवहार, कैसा व्यवहार-आचरण करना और कैसे जिंदगी जीना! अन्यथा वे निरूद्देश्य भटकते रहेंगे। बच्चे सोचते हैं, 'ओह, हमें जो कुछ भी करना है वह हम कर सकते हैं। उसमें गलत क्या है?' गलत क्या है, यह आप उन्हें सिखाईये। उनको पैसा मत दीजिये। उन्हें काम करने दीजिये। अपने बच्चों को उन्होंने किये काम के लिये कभी भी पैसा मत दीजिये। अगर वे काम करते हैं तो अपने लिये। कुछ काम करने के लिये उन्हें पैसे देना यह बहुत बुरी बात है। वे मजदूर नहीं हैं। यह सब प्रशिक्षण देना अत्यावश्यक है।

हमेशा बच्चों के पीछे उनके खातिर नहीं दौड़ना है। क्योंकि एक बार उन्हें पता चल गया कि वे आप पर हावी हो रहे हैं, तो वे आपके सिर पर चढ़ बैठेंगे। आपके साथ में होने पर उनका स्थान कहाँ है, यह उन्होंने अवश्य

जानना है। धीरे-धीरे वे सीख जाएंगे और अच्छा व्यवहार करेंगे। आप उनको इन्सान बनाईये या फिर शैतान बनाईये। वह तो आपके हाथ में हैं। अवसर आने पर भी आपने कभी कठोर नहीं बनना चाहिये। पर किसी भी प्रकार से बच्चों के शासन में, वर्चस्व में, आपको नहीं होना चाहिये।

बच्चों को मालूम होना चाहिये कि आप उनसे प्यार करते हैं। उनके लिये छोटी-छोटी बातें ऐसी कीजिये जिससे आप उनकी चिंता करते हैं, उनका ख्याल रखते हैं यह दिखाई दे। आपका प्रेम प्रकट कीजिये। उन्हें केवल एक ही भय है कि कहीं वे आपका प्यार खो न दे। प्रेम को व्यक्त किया जाना आवश्यक है। बच्चों को जो सदैव दी जानी चाहिये अर्थात् प्रेम, यह मुख्य चीज़ है। और सदैव उनका आदर, सम्मान करना चाहिये। जैसे किसी बड़े आदमी को संबोधित किया जाता है, उस प्रकार संबोधित कीजिये। आदर और प्रेम। यहीं तो असली मुद्दा है। उन्हें पीटने के बजाय सम्मान और प्रेम दीजिये। सबसे पहली प्राथमिकता यही है कि उन्हें भरपूर प्यार दीजिये, अनुशासन उसके बाद में।

आदतें लगवा लेने की अनुमति बच्चों को नहीं देनी चाहिये। उनको बहुत अधिक सुखसुविधा और आराम के आदि नहीं होना चाहिये। उन्होंने दूसरों की सेवा करनी चाहिये, दूसरों के लिये भी चीज़ें लानी चाहिये। हमेशा किसी के साथ काम में व्यस्त होना चाहिये। पर हमने बच्चों से कठोर परिश्रम, कार्य नहीं करवाना चाहिये। भारत में सारा समाज बच्चों के अवधान को इस तरह ढाल देता है कि उंगली हमेशा वहीं दिखायेगी कि बच्चे का ध्यान सही चीज़ पर हो।

बच्चे को सदैव बेचैन रखना और जैसे किसी एक प्रकार की स्पर्धा में प्रवेश करना है इसलिये तैयार करना यह समझदारी की बात नहीं है। बच्चों को सामान्य रूप से बढ़ने दीजिये। यह इतना कठिन नहीं है, सहजता से लीजिये।

अध्याय ८

भोजन

बच्चों को बचपन से ही सिखाया जाना चाहिये कि अन्न या खाने-पीने की चीज़ों के बारे में बहुत ज़्यादा होहल्ला, चिल्लाना या व्याकुल हो जाना यह सब नहीं करना चाहिये। अगर आप ही उनके भोजन या खानपान के बारे में अधिकाधिक व्यग्र होंगे तो फिर बच्चे तो अधिक चिकित्सा करेंगे ही। पर अगर आप आकुल या संभ्रमित नहीं होंगे, तो आपने बच्चों को जो कुछ भी दिया उसे वे खा सकते हैं। अर्थात् खाना भी अच्छा, स्वादिष्ट और उसी प्रकार का चाहिये। इसका यह मतलब नहीं है कि बच्चा खाने के बारे में इतना अधिक संभ्रमित, हठी हो जाये कि आगे चल कर बड़ा होने पर उसे इस प्रकार का या उस प्रकार का ही भोजन चाहिये। बच्चे सभी प्रकार के खान-पान का आनन्द लेने के लिये समर्थ व तैयार रहने चाहिये।

हम बच्चों को स्वास्थ्यकारक खाना देंगे। मैं उस तरह का व्यक्ति नहीं हूँ जैसे कि गांधीजी हमें मात्र उबला हुआ खाना दिया करते थे। और उस उबले चीज़ के ऊपर सरसों का तेल! क्योंकि वे कहते थे कि इसी प्रकार आप अनास्वाद (स्वादिष्ट व्यंजनों के लिये विरक्ति) उत्पन्न कर बढ़ा सकते हैं। वे कहते थे कि आपने स्वादिष्ट चीज़ लेनी ही नहीं चाहिये। बच्चों के बारे में हमने इतना कठोर नहीं होना चाहिये। गांधीजी के आश्रम में रह कर वहाँ से बाहर आये हुये लोग अत्यधिक कठोर लोग हैं। अधिक कड़े और दूसरों से अनुकूल न होने वाले! वे स्वयं से भी पूर्णतः इतने कठोर होते हैं कि दूसरे लोग उन्हें समझ ही नहीं सकते। बच्चों को तो ऐसे लोग बनना हैं जो दूसरों से समानशील, अनुरूप हो और दूसरों से व्यवहार करना जानते हो। ना हिमालय में जा कर बैठना है और दूसरों को छूना भी नहीं। बच्चों का परिपालन ऐसे

करना चाहिये कि वे सर्वसामान्य बच्चे हो। ऐसा नहीं कि उन्हें सब कच्चा खाना या स्वास्थ्य के लिये पथ्यकर, हितकारी भोजन ही केवल लेना है। पर अच्छा, नियमित सर्वसामान्य अन्न जिससे उनका स्वास्थ्य सुधर जायें। यदि आप खाने का समय निश्चित कर देते हैं तो स्वास्थ्य सुधारने के कारणों में यह भी एक कारण है। आप सुबह में उनको बहुत विकल्प देते हैं कि उन्हें अपनी इच्छा के अनुसार खाना चुनना है। 'आपको (खाने में) क्या चाहिये?' ऐसा कुछ करने से नहीं चलेगा। प्रत्येक बालक के लिये जो कुछ अच्छा है उसीको प्रत्येक बालक ने खाना चाहिये। 'आपको क्या चाहिये?' आपने ऐसा पूछने पर बच्चे कहेंगे, 'मुझे चावल चाहिये।' दूसरा बोलेगा, 'मुझे यह चीज़ चाहिये।' क्या फर्क है इन दोनो में? यह तो वही बात है। 'मुझे मक्के की लाई-पॉपकॉर्न चाहिये। मुझे वो चाहिये।' यह सब अहंकार को बढ़ावा देने वाली बाते हैं। लोग इसी प्रकार से अहंमन्य, अहंकार की ओर अभिमुख होते हैं। वे अचानक कूदकर (अहंकार के) घोड़े पर सवार हो जाते हैं। अगर आप किसी के बारे में दयावान, सौम्य हैं तो आपको उपकृत रहना चाहिये और आपको लगना चाहिये कि वे आपसे दयालु, मृदु हैं। उसके बजाय उन्हें लगता है, 'ओह, मैं तो पूरे जगत् का स्वामी ही हूँ।' ऐसा होता है और उसका कारण यह है कि बचपन में शुरू से ही उनका स्वयं पर नियंत्रण नहीं।

सुबह जो कुछ पकाया गया है वहीं उन्होंने लेना है। आपने भी सीखना ही चाहिये कि हम अपने बच्चों को क्या कहते हैं, 'जमीन पर कहीं कुछ गिर जाता है, तो तुम उसे झट से उठा लो और फेंक दो और अपने हाथ भी धो लेना।' पर हम केवल इतना ही कहते हैं, 'नहीं, नहीं, नहीं, उसे नहीं (लेना है)।' अगर आपके मुँह से भी कहीं कुछ गिर जाता है, तो आपने उसे उठाना नहीं है। अगर आप बिलकुल उन्माद और उत्साह से ऐसा नहीं करेंगे, तो आजूबाजू में संसर्ग दोषों के जो सब प्रकार हैं, उनसे आप अपने बच्चों को बचा नहीं सकते।

अध्याय ९

बच्चों ने स्वाभाविक रूप से सामूहिक होना चाहिये

बच्चों ने आंटी-अंकल इस प्रकार के पारिवारिक संबंध प्रस्थापित करने ही हैं। केवल तुम्हारे पिता और माता ही महत्वपूर्ण हैं, ऐसा कुछ नहीं है। बच्चे बहुत स्वतंत्र वृत्ति के होते हैं। वे अपना खयाल रख सकते हैं, वे खुद को सम्हाल सकते हैं। केवल उन्हें खुश रखने के लिये आप उनसे इस प्रकार का व्यवहार करते हैं। नहीं, ऐसा बिलकुल नहीं। आपको यह जानना ही चाहिये कि बच्चा बहुत बुद्धिमान होता है। और सामूहिकता की आपकी अपनी जो समझ है उसके अनुसार बच्चे के मन को झुकाना चाहिये, मोड़ देना चाहिये। और अगर आपने वैसा नहीं किया तो आपके बच्चे दूसरे सब बच्चों के समान बन जाएंगे-दूसरे बच्चे, जो कि भटकते रहते हैं, निरूद्देश्य! स्वेच्छाचारी! स्वच्छंद!

आपने बच्चों को प्रेम से अनुशासित करना आपने सीखना ही है। वे कार्यक्रम में शांति से क्यों नहीं बैठ सकते? उनके संबंध में कौनसी समस्या है? बिलकुल शुरू से ही उन्हें चैतन्य लहरों का अनुभव करने के लिये तैयार करना है। दूसरे लोगों के साथ उन्हें बिठाना ही है। इसका कारण यह है कि उन्हें उनके माता-पिता ही अपने लगते हैं और बाकी लोग नहीं। और इसी प्रकार से वंशद्वेष भी पनपता है। क्योंकि उन्हें लगता है कि दूसरे लोग जो गोरे नहीं, वे सामान्य अविकृत लोग नहीं हैं। इस प्रकार की बातों से सुरक्षितता तथा एकाकी रहने का स्वभाव बन जाता है और यह वृत्ति बढ़ने भी लगती है। और तब आप उन बच्चों को पूर्णत: अपने पास ही रखना शुरू कर देते हैं। इसके विपरीत आप उन्हें जरा खुले में छोड़ दीजिये-सबसे बातें करने के लिये, अपना हृदय सबके सामने खोलने के लिये। जो लोग आयु में बड़े हैं वे

भी दूसरे के बच्चे को छूने के लिये भी डरते रहते हैं। वे पूछेंगे, 'क्या मैं बच्चे को उठा लूं?' उस में क्या हानि है? भारत में आप किसी के भी घर जाईये, वहाँ लोग बच्चे को यूँ ही उठा लेंगे। और अब ये लोग कहते हैं कि रोगों से रक्षा करने के लिये और ऐसी ही सारी चीज़ों के लिये वे दूसरे बच्चों को छूने तक के हिचकिचाते हैं। पर इसके विपरीत ऐसा होता है कि इन बच्चों में रोगों का अभाव और उसकी प्रतिरोध शक्ति निर्माण होती है।

अतिसुरक्षित बच्चों की अवस्था खरतनाक होती है। क्योंकि उन्हश्रळ किसी भी चीज़ से मुक्ति नहीं है। कल्पना कीजिये कि उस देश में सब प्रकार के परोपजीवी रहते हैं। फिर भी हम इन अतिसुरक्षित व्यक्तियों से बेहतर रहते हैं क्योंकि कितनी सारी चीज़ों से हम मुक्त हैं। यही कारण है कि स्वास्थ्य की दृष्टि से ऐसे अतिसुरक्षित व्यक्ति दुर्बल होते हैं। अगर बच्चे सारा समय बंद रखे जाते हैं, दूसरों के संपर्क में नहीं आते हैं, तो ऐसे बच्चे स्वार्थी बन जाते हैं। वे बहुत ही दुर्बल और क्षीण-लघु-दृष्टिवाले बनते हैं। उन्हें बाहर खुला छोड़ दीजिये। बच्चे से कोई अधिक प्रभावशाली, ताकतवर व्यक्ति आयेगा, आपके बच्चे को पकड़ में ले लेगा और फिर उस बच्चे के खातिर पैसा ऐंठ लेगा, और ऐसा सब कुछ करेगा। पर अगर आप बच्चे को इधर-उधर खेलने देंगे तो रोग भी अदृश्य हो जाएंगे।

दूसरे लोगों के विश्वास पर उनके पास हमने अपने बच्चे छोड़ देना आवश्यक है। अन्यथा बच्चे इतने अकेले पड़ जाते हैं, वे आपसे चिपके रहते हैं, वे किसी के भी पास नहीं जा सकते। भारत में जब आप किसी के घर जाएंगे, तो पहले बच्चे ही आपका स्वागत करेंगे। वे कहेंगे, 'अच्छा, तो बैठिये।' उसके बाद वे आपको कुछ देते हैं। घर में अगर कोई भी न हो, तो भी वे आपका ख्याल रखेंगे। वे आपके बारे में सबकुछ जानते हैं। आपने क्या कहा? आपने क्या माँगा? आपको क्या चाहिये था? कितनी मिठास! मैं ऐसे बच्चों से मिली हूँ, जिनके बचपन में मैंने उनका संगोपन किया था और उन्हें

वह सब याद है जो मैंने उनको बताया था। मैंने जो कहानियाँ सुनायी थी, और मैं कैसे उनकी देखभाल करती थी। बिलकुल छोटी-छोटी हर एक बात उन्हें याद है। उनको अभी भी सारी बातें याद है, यह जानना भी कितना मधुर होता है!

पर आप बच्चों का सबके सामने प्रदर्शन या अवमान मत कीजिये, उन्हें उधेड़ कर मत रखिये। आप बच्चों पर कुछ ज़्यादा ही हावी हो जाते हैं। फिर बच्चे भी आपका ध्यान सदा अपनी ओर खींचने का प्रयास करते हैं क्यों कि उन्हें आपकी आदत सी लग गयी है। वे दस सवाल पूछेंगे और खूब ज़्यादा बोलेंगे भी। वे क्या क्या बोलते रहेंगे और आप थक जाएंगे। मैं जानती हूँ कि जब मैं रेल से आ रही थी, तो एक औरत भी मेरे साथ यात्रा कर रही थी। वह स्त्री उसके बच्चे के साथ और मेरे साथ यात्रा कर रही थी। माँ को अपने बेटे के साथ बोलना ही था और उसे कहानियाँ भी बतानी थी। मैंने कहा, 'ऐसा मत करो। तुम बच्चे की ओर बहुत ज़्यादा ध्यान दे रही हो और उसको क्या चाहिये यह भी बहुत ज़्यादा जानने की कोशिश मत करो। इसलिये वह सारा समय तुम्हारा ध्यान, अवधान उस पर रखने की माँग कर रहा है। उसने तो खेलना ही चाहिये, उसे अपने आपसे ही खेलना है। तब कहीं उसमें सुधार होगा।' बेचारी औरत! उसको मालूम नहीं था कि क्या करना चाहिये, वह तो सारा समय बच्चे को खुश रखने की कोशिश कर रही थी। उसे बस इतना ही देखना था कि बच्चा खुश है और बीच बीच में तकलीफ नहीं दे रहा है। पर यह तो कोई तरीका नहीं है, बस, बोलना नहीं, बोलना बंद ही कर देना है।

अब प्रश्नों के संबंध में......और एक बात यह भी है कि बच्चों को 'क्यों?' यह प्रश्न मत पूछने दीजिये। हमेशा आपसे प्रश्न पूछना यह बच्चों का काम ही नहीं है, यह बहुत गलत है। इससे तो उनमें बचपन से ही बहुत अहंकार आ जाता है। 'क्यों?' कर के वे किस चीज़ के बारे में पूछ रहे हैं? हर

एक चीज़ के बारे में बताने की कोई आवश्यकता नहीं। जब वे बड़े हो जाएंगे तो उस चीज़ के बारे में जान जाएंगे। उनमें फिर दूसरों को परेशान करने की वृत्ति आती है। बच्चे ने बार-बार पूछ कर तकलीफ देने पर आपने कहना चाहिये कि यह पेड़ है, यह वो चीज़ है, ऐसी बच्चों की अपेक्षा होती है। जब वे बड़े हो जाते हैं तब भी आपको उन्हें ऐसे ही बताना पड़ता है। उनके बचपन में भी यह सारी बातें बताने का क्या उपयोग है जिनको वे भूल जाते हैं? अत्यधिक ज्ञान, उससे उनके मस्तिष्क को भर देना, वह ज्ञान उनके अन्दर सुई के सीरे से डाल देना ये सब बातें आवश्यक नहीं है। क्योंकि अगर आपने उनके मस्तिष्क में बहुत ज़्यादा ज्ञान ठूंस ठूंस कर भर दिया, तो वे भी संभ्रम में पड़ जाएंगे और बाद में उनको परेशानी होगी। बच्चे जैसे हैं, वैसे ही उन्हें रहने दीजिये। जो कुछ जितना आवश्यक है, उतना ही उन्हें बताईये। उनकी बिलकुल छोटी आयु में ही हम उन्हें अत्यधिक अनावश्यक ज्ञान देते हैं। बच्चों का मूलाधार स्वस्थ और विश्वसनीय रहने दीजिये। उन्हें दूसरे लोगों से मिलने दीजिये, दूसरों से मित्रता करने दीजिये, सब के साथ खेलने दीजिये और सभी ओर घूमने दीजिये। इसके लिये उन्हें अनुमति दीजिये। बिलकुल बचपन से ही हमारे बच्चों को हमने सामूहिक और सशक्त मूलाधार वाले बनाना है।

बच्चों के बारे में बहुत सारी ऐसी बातें हैं जो जानना जरूरी है। आपको उनकी चैतन्य लहरों के बारे में अवश्य जानना चाहिये। उनकी चैतन्य लहरों के संबंध में आपको जागरूक रहना चाहिये। और उसमें क्या गलत है और बच्चे क्या करते है यह खोजने की कोशिश कीजिये। उदाहरण के लिये आपको ऐसा बच्चा मिलता है जो गलत, अयोग्य बर्ताव कर रहा हैं। उसके साथ सारा समय नहीं रहना है और वह जैसे करता है वैसा मत करने दीजिये। उस बच्चे को एक बार बुलाईये, उसे बिठाईये और उस बच्चे से कहिये, 'तुमने इस प्रकार करना चाहिये। जब तुम श्रीमाताजी के साथ अन्दर होते हो तो

उनकी तरफ ध्यान दो।' इन नये बच्चों को ढ़ालने का काम करने वाले आप ही हैं। आप सहजयोगी हैं, इसलिये खास करके आपको ये बच्चे दिये गये है, उनका जीवन बिगाड़ने के लिये नहीं। आप जानते हैं, कुछ बच्चे इस प्रकार की चीज़ से पागल हो गये हैं। जैसे कि एक बच्चा अपनी माँ के साथ यहाँ था। देखिये, वह माँ ही खुद इतनी गैरजिम्मेदार थी कि आप उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। जब मैंने उसकी गैर जिम्मेदारी और जिस गन्दगी से वह अपने बच्चे की देखभाल कर रही थी, इसके बारे में सुना तो मैं दंग रह गयी कि वह ऐसे कैसे कर सकती थी। आप भी उसी के जैसी दूसरी स्त्री न बनिये जिससे आपके बच्चे का स्वास्थ्य, मन सब कुछ बिगड़ जाएगा। अगर आपकी जगह साफसुथरी और ठीक-ठाक हो, तो वहाँ रहना बच्चे बहुत ही पसंद करेंगे।

परंन्तु किसी भी माँ को बच्चे के साथ अपने कमरे में नहीं बैठना चाहिये। यह कानून है। आप दर्शन कक्ष अर्थात ड्राईंग रूम में आपके बच्चे के साथ बैठ सकती हैं। और जब बच्चा सो रहा है तो उसे उसके अपने कमरे में रहना चाहिये। अन्यथा बच्चे को ड्राइंग रूम में रखिये। आप देखेंगे कि बच्चा ज़्यादा खुश होगा क्योंकि सामूहिक होना स्वाभाविक है। दूसरों के साथ मिलना-जुलना, उनसे बातें करना और दूसरों के बारे में जान लेना बच्चे के लिये स्वाभाविक है। यह बिलकुल सहज, स्वाभाविक है। अबोधिता ऐसी ही होती है। अबोधिता पूरी दुनिया को जानना चाहती है। ऐसे समय पर आप अगर बच्चे को ऐसा करने नहीं देंगे अर्थात् स्वाभाविकता में नहीं रहने देंगे, तो वह विकृत, विपरीत परिणाम लाने वाला होता है। उसकी अपनी समस्यायें हैं। इसलिये बच्चों को बेहतर जिंदगी, बेहतर परिस्थिती, बेहतर शिक्षा, बेहतर अनुशासन दीजिये। क्योंकि आप साधनसंपन्न हैं। आपके पास जो जितना था वह उन्हें मत दीजिये। यह वास्तविक सच्चा प्रेम है। अन्यथा वह तो स्वामित्व वाली बात हो जाएगी। मैं इस संबंध में आपसे बोलना चाहती थी क्योंकि मूलाधार के विषय में मैंने आपसे बात की थीं। मेरे देखने में और ध्यान में आ

रहा है कि आपके बच्चों के साथ क्या हो गया है। और मैंने देखा कि उनमें अनुशासन की जो मात्रा है वह आपसे ही आयी है। आप कितने अनुशासित हैं? और यहीं कारण है कि ऐसा करने से आप उनके हाथ का खिलौना बन जाते हैं। बच्चे जानते हैं कि आप उन पर निर्भर हैं। उनके बिना आपका अस्तित्व नहीं हो सकता। इस बात की उन्हें कल्पना है। इसलिये वे आपकी बात ध्यान से नहीं सुनते। पर यदि उन्होंने जान लिया कि अगर वे अच्छा आचरण नहीं करेंगे तो आपका प्यार खो देंगे, तब वे ठीक होंगे।

बच्चे बहुत बुद्धिमान होते हैं। आपके बच्चे समझ लेने के सही रास्ते पर लाये गये हैं यह आप देखिये। क्योंकि वे अलग बच्चे हैं, विशेष बच्चे हैं और आप पर जो विश्वास है, उसी विश्वस्तता में आपको दिये गये हैं।

बच्चों ने स्वाभाविक रूप से ही सामूहिक होना चाहिये।

अध्याय १०

बच्चों को कैसे सुधारें?

बच्चों की गलतियाँ दूर कर उनमें सुधार लाने का, उन्हें ठीक करने का एक रास्ता है। मुझे सजा देना अच्छा नहीं लगता। पर बच्चों को कहानियाँ सुना कर, उनसे बातचीत कर, उनकी समस्याओं को तथा अन्य बातों को यथाक्रम लगाकर उसके अनुसार सुलझा कर आप यह सुधार अच्छी तरह से कार्यान्वित कर सकते हैं। वे सब साक्षात्कारी आत्मायें हैं, वे साधारण बच्चे नहीं हैं। अगर आप उनसे बात करते हैं तो वे तत्काल सुजान, विवेकी बन जाते हैं। जब वे बोलते हैं तो सुज्ञता का ही बोलते हैं। अगर आप उनसे बोलते हैं तो आपको लगता है कि आप दादा-दादी या परदादा-परदादी के बीच में हैं। आपको समझना आवश्यक है कि ये विशेष बालक हैं। इसलिये उनसे आदरयुक्त व्यवहार करना चाहिये। उनकी परवरिश भी आदर से ही होनी चाहिये। और उनके मन में यह चीज़ धीरे-धीरे ढ़ाल देना चाहिये, उतारनी है कि, 'आप विशेष बालक हैं' और यह कि, 'आप ऐसे बालक हैं कि जिन्हें दुनिया बदलनी है। आप इस पृथ्वी पर बहुत महान उद्देश्य से आये हैं और यहीं कारण है कि आपकी परवरिश इस प्रकार की जा रही है।' जब बच्चों की समझ में आता है कि वे स्वयं अनुशासित हैं तो अनुशासित करना भी उनमें आता है।

उनको बताईये, 'आप साक्षात्कारी आत्मायें है, तो आपका अवमान नहीं हो सकता। थोड़ासा उनके साथ बैठिये। उनसे संभाषण, मंत्रणा कीजिये। उन्हें बताईये, 'हम अब एक बैठक करेंगे जिसमें संभाषण, मंत्रणा होगी।' उनसे कहिये, 'हम सब बैठ जाएंगे।' जैसे कि मंत्रणा कक्ष (conference Hall) होता है, उसी प्रकार उन्हें अपनी अपनी कुर्सी पर बैठने दीजिये और फिर उन्हें

बताईये, 'अब देखिये, हम सब सहजयोगी हैं। आप भी तो सहजयोगी ही हैं। सारी दुनिया आपको गौर से देख रही है। आपको सम्माननीय बालक बनना है। आपको इस प्रकार से करना है। आपको आपकी चीज़ों में दूसरों को भी हिस्सा देना है। अन्यथा लोग कहेंगे कि आप सहजयोगी नहीं हैं। आपको अपनी प्रतिष्ठा गरिमा होना आवश्यक है।' उनके व्यक्तित्व को इस प्रकार विकसित कीजिये कि वे जानेंगे कि उन्हें प्रभावशाली, विभूतिमान और राजा जैसे ऐश्वर्यशाली होना है। वे दूसरों के समान क्षुद्र, हलके, सस्ते नहीं हो सकते। क्योंकि आप सदासर्वदा कहते हैं, 'उसको मत छुओ। वह मत करो।' बच्चे तो जानते नहीं है। वे संभ्रम में पड़ जाते है। गड़बड़ा जाते हैं। क्या करना है, हमें अच्छा व्यवहार, बर्ताव कैसे करना है, अच्छी बातें कैसी करनी है, दूसरों की सहायता कैसे करनी है, अपने खिलौने दूसरों को कैसे देने है, अपनी चीज़ें ठीक-ठाक व्यवस्थित कैसी रखनी है इन सब विषयों के बारे में बच्चों से बोलिये, बात कीजिये। यह एक प्रशिक्षण है।

आपके अपने व्यवहार से भी बच्चे सीखते हैं। आप अपने बच्चों को पीने के लिये नहीं कहते हैं। और फिर अगर आप ही मछली जैसे पीते रहते हैं तो आपकी बात बच्चे कैसे सुनेंगे औ मानेंगे? अगर आप ध्यान नहीं करते, आप अनुशासित नहीं हैं, आप अस्तव्यस्त, अशोभनीय वेश पहनते हैं और अव्यवस्थित रहते हैं, आप अत्यंत बेपर्वाह हैं, आप लोगों का मान नहीं करते, आपकी भाषा-वाणी बेछूट है या आप कमाल के तीक्ष्ण-कठोर, चुभने वाले हैं, तो बच्चे तो यहीं सारी चीज़ें आपसे ग्रहण करते हैं, उठा लेते हैं। वे ऐसी चीज़े इतनी शीघ्रता से आत्मसात करते हैं। बच्चे किस प्रकार आत्मसात करते हैं यह भी चकित कर देने वाली बात है।

अध्याय ११

पैसा

बचपन के बाद पैसों में हास्यास्पद अभिरूचि बढ़नी शुरू हो जाती है। पर श्रीगणेशजी के लिये क्या है? पैसा तो उनके चरणों की धूलि है। सोना उनके लिये क्या है? कोई भी चीज़ उनके लिये क्या है? श्रीगणेशजी सोने का मुकुट पहनते हैं, या कुछ भी नहीं पहनते, उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। वे वहाँ हैं, उनका मस्तक भी बिलकुल जैसा था वैसा ही है। आदर से या पूजनीयता से लोग उन्हें सुवर्ण या कोई भी वस्तु दे सकते हैं अपने मन में समाधान लगने के लिये। ठीक है, पर उन्हें इससे क्या मतलब है? बच्चा दूसरे किसी से किसी भी चीज़ को स्वीकार नहीं करता। पर अगर वह लेता है तो वह सोचेगा, 'अब मैंने इसे वापिस कैसे करना चाहिये?' अगर आपने बच्चों को बिलकुल छोटीसी भी चीज़ दी तो वे उसको सुरक्षित रूप से रखेंगे और हमेशा याद रखेंगे कि आपने वह चीज़ दी थी।

अध्याय १२

भाषा प्रसन्न होनी चाहिये

आप नहीं कह सकते, 'मुझे यह पसंद है' या 'इस प्रकार के देवता मुझे पसंद है।' क्या यह किसी व्यक्ति की पसंद के लिये किया जाने वाला है? इसी प्रकार से व्यक्ति बिलकुल स्वच्छंद और मनमानी करने वाला हो जाता है और सामूहिकता से बाहर हो जाता है। यह वही चीज़ है जो बच्चों को सिखानी ही होती है। 'मैं द्वेष करता हूँ।' यह दूसरा शब्द है। इस शब्द को बोलने नहीं देना चाहिये। यह बहुत ही गलत शब्द है। बच्चों ने ऐसा बुरा, खराब शब्द कभी भी सीखना नहीं चाहिये। यह बताया जाना चाहिये कि हमारी भाषा बहुत अच्छी ही होनी चाहिये। हमें बहुत अच्छी भाषा का उपयोग करना चाहिये और हमें क्रोधित नहीं होना है। हमारी भाषा प्रसन्न, मृदु ही होनी चाहिये। यह अति महत्वपूर्ण है। जैसे संतजन प्रसादपूर्ण, कोमल भाषा बोलते हैं उसी तरीके से आपको भी बोलना है, रोष में नहीं। अपमानजनक पद्धति से या फिर किसी भी प्रकार से उन्हें नीचा दिखाने के लिये नहीं। आपने अपने बच्चों से भी सम्मानपूर्वक बात कीजिये। जैसा कि आप देखते हैं कि हमें अपने बच्चों को डाँटना होता है, तो हम उनका अधिक सम्मान करते हैं, उन्हें अधिक प्रतिष्ठा देते हैं। आप बोलते हैं, जैसे कि अंग्रेजी में thou अर्थात् 'तू' कहते हैं। 'अब मुझे बिठाया जाएगा।' तब बच्चा डर जाता है, 'मैंने क्या किया है?' 'तुम' या 'आप' की जगह हम 'तू (thou)' शब्द का उपयोग करते हैं। 'आप ही महाशय, इधर आईये।' तो 'महाशय' डर जाते हैं और कहते हैं, 'क्यों, मैंने क्या किया?' हमारे नौकरों को भी हम इसी तरह से बिगाड़ते हैं, तो वे डर जाते हैं, 'क्यों? आज ही क्यों ऐसे कहा गया?' परंतु अपशब्द या गालियों का प्रयोग नहीं करना है और न तो बच्चों को पीटना है। अगर वे बहुत ही

उद्धत, विचित्र, विक्षिप्त हैं, तब तो यह ठीक है। यह ठीक तो है पर कभीकभार ही ऐसा बच्चा होता है। क्योंकि उनमें से अधिकतर साक्षात्कारी आत्मायें हैं। तो ऐसे बच्चे आपको इतनी तकलीफ नहीं देंगे। वे फिर से आपके पास ही आएंगे। बच्चों ने ऐसा कहना सीखना है, 'मैं आप से क्षमायाचना करता हूँ।' और 'क्षमा कीजिये!'

अध्याय १३

दीप दूसरों के लिये जलता है, न कि अपने लिये

लोगों को अपने बच्चों से बहुत अधिक आसक्ति, लगाव होता है। वे अपने बच्चों के बारे में ही केवल सोचते हैं और किसी दूसरी चीज़ के लिये नहीं। यह तो एक अन्य प्रकार का स्वार्थ ही है। अगर आप केवल अपने ही बच्चों के बारे में सोचेंगे और दूसरों के लिये नहीं, तब तो वे बच्चे शैतान बनेंगे और आपको अच्छा खासा सबक सिखायेंगे। फिर अगली बार आप कहेंगे, 'हे भगवान, मुझे कोई बच्चा नहीं दीजिये। मेरे लिये बस हो गये इतने ही।' पर अगर आप उसी बच्चे को सामूहिक बनायेंगे और दूसरों को अपनी चीज़ें देने के लिये और उससे आनंद पाने के लिये सिखायेंगे, तो बिलकुल बचपन से ही वह बच्चा अत्यधिक उदार हो जाता है। 'ऐश्वर्य' का अर्थ केवल पैसा, धन नहीं है। परंतु उदारता पैसों से भी ऊपर और उत्तम है और यही है 'ऐश्वर्य!' और यह किसी अवतरण का तथा सहजयोगी का लक्षण है।

बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तो माता-पिता उन्हें कुछ पैसे भी नहीं देते और उनकी देखभाल भी नहीं करते। पर फिर भी वे स्वामित्व की भावना से ग्रस्त रहते हैं। यह बात समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है कि सबसे पहले उनके बच्चों की देखभाल कीजिये, उनके बच्चों को स्वस्थ, पुष्ट बनाने के लिये जिस चीज़ की आवश्यकता है वह उन्हें दीजिये, उन्हें मार्गदर्शन कीजिये, उनको बिगाड़िये मत। और दूसरी बात यह है कि एक बार जब आपके बच्चों का विवाह हो गया और उनकी भी संतानें हो गयी, तो अपने बच्चों पर, उनकी संतानों पर और उनकी पत्नियों पर स्वामित्व भाव जताने के प्रयास मत कीजिये।

बाद में तीसरी (महालक्ष्मी का अवतरण) क्रिस्त की माता के रूप में आयी। उसने तो अपने बच्चे को क्रूस पर चढ़ाने के लिये दे दिया। क्या हम

थोड़ासा अपने अंदर झांक कर अन्तर्निरीक्षण करेंगे? हम अपने बच्चों से बाज जैसे कितने चिपके हुए रहते हैं? बच्चों को किसी ने कुछ कह दिया, तो लोगों को अच्छा नहीं लगता। हमारी अपने बच्चों से इतनी आसक्ति होती है। फिर भी हम उन्हें क्या सिखा रहे हैं? क्या हम उन्हें कुछ त्याग सिखा रहे हैं? क्या हम उन्हें सहभाग करना सिखा रहे हैं? क्या हम उन्हें किसी प्रकार की सहिष्णुता सिखा रहे हैं? क्या हम उन्हें क्षमाशीलता सिखा रहे हैं? क्रूस पर चढ़ाना भले ही छोड़ दीजिये, या थोड़ीसी सजा देना भी छोड़ दीजिये। अब तो बच्चा सहजयोगियों के लिये सबसे बड़ी कठिन परीक्षा, एक दिव्य बन गया है। सभी के बच्चे होते हैं। उसमें इतनी क्या बड़ी बात है? बड़प्पन या महानता तो इसमें है कि आप किस प्रकार के बच्चे हैं।

क्या हम हमारे बच्चों को बड़े होने दे रहे हैं? क्या वे ईर्ष्या, मत्सर करते हैं? क्या वे सन्त हैं? क्या वे सुंदर हैं? वे दूसरों के साथ किस प्रकार से बोलते हैं? क्या उनमें आत्मविश्वास है? कल या भविष्य में वे नेता बनने वाले हैं। जैसे कि राजा शिवाजी की माता, जिजामाता। कैसे उन्होंने अपने पुत्र को महान बनाया। वह माता ही होती है जो पुत्र को महान बनाती है। अगर उसे हमेशा बच्चे को पकड़ कर रखना है और वह चाहती है कि बच्चे ने भी माँ को पकड़ कर रखना है, तो यह आत्मघातक है।

हमारे बच्चे बड़े होते होते महान हो जाये यह देखना हमारा कर्तव्य है। हमसे अधिक महान्। उनको सारी दुनिया पर ध्यान रखना है, सारी दुनिया की देखभाल करनी है। अगर आप बच्चों के साथ कुछ समय व्यतीत करते हैं तो ध्यान दें कि आप उन पर अच्छे संस्कार कर रहे हैं, प्रेम से उनका संवर्धन कर रहे हैं। उन्हें बताईये कि उन्होंने दूसरों को प्रेम देना चाहिये कि उन्होंने इस प्रकार से व्यवहार करना चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति को उनके प्रकाश का अनुभव बोध हो। अन्यथा वे रावण के समान राक्षस बन जाएंगे। रावण एक साक्षात्कारी आत्मा थे और माँ के द्वारा बिगाड़े जाने से राक्षस, शैतान बन

गये। अगर आप नहीं चाहते कि आपके बच्चे शैतान न हो, तो सबसे पहले यह बात समझ लीजिये कि वे आपके बच्चे नहीं हैं। आपकी विश्वस्तता में रखे गये मेरे बच्चे हैं। और अपने बच्चों को आपने बौने और छोटे नहीं बनाना है। हमें हमारे बच्चों को दीपों के समान बनाना है। दीप दूसरों के लिये जलता है, न कि अपने लिये। अगर आप एक हीरा लेते हैं और उसको गंदी नाली में डालते हैं, तो वह खो जाएगा, बिलकुल वैसे ही। यदि आपके पास सर्वोत्तम बालक भी है तो भी 'यह मेरा बच्चा है, यह मेरा है' इस प्रकार की मूर्खतापूर्ण कल्पना से आप उनको बरबाद कर सकते हैं। आप उन्हें अच्छी चीज़ों के उजालों के सामने आने दीजिये, क्या अच्चा है, उन्हें बताईये। दूसरों के साथ कैसे अच्छा बनना है यह उन्हें बताईये। उनसे कहिये कि दूसरों की देखभाल कैसी करनी है। उन्हें बताईये दूसरों के पैर कैसे दबाना है, उनके बाल कैसे संवारने हैं, दूसरों को खाना कैसे देना है।

उनको सिखाईये। उन्हें छोटे-छोटे बर्तन हाथ में लेने दीजिये और दूसरों को खिलाने दीजिये, पक्षियों को भी! उन्हें फूल पौधों को पानी देने दीजिये। उन्हें छोटा मत बनाईये। उनमें से कुछ बच्चे वास्तव में अतिचपल और शीघ्र क्रियाशील होते हैं। बहुत महान सन्त!

सहजयोग में आप सब लोगों को आशीर्वाद प्राप्त हो गया है। आपको किसी भी चीज़ के लिये त्याग नहीं करना है, पर आपने आपके बच्चों का उचित प्रकार से पालन कर के उनका विकास नहीं किया, तो बच्चे आप ही को जिम्मेदार ठहरायेंगे। वे कहेंगे, 'आपने हमारे विकास के लिये पूर्ण अवसर, क्यों नहीं दिया?' अगर आपने जान लिया कि आपका बच्चा जिद्दी है या वह कंजूस दिखाई देता है, अगर वह नहीं जानता कि दूसरों के साथ प्यार कैसे बाँटना है या वह अपनी ही चलाने वाला, दूसरों पर वर्चस्व करने वाला हो गया है, तो इस वृत्ति को तत्काल संयमित करना है। बच्चे बहुत चालाक, अतिमात्र चतुर होते हैं। जिस पल उनकी समझ में आता है कि वे आपका प्यार खो देंगे, तब से वे अच्छा व्यवहार करने लगते हैं।

अध्याय १४

सहज संपर्क बढ़ाईये

प्रत्येक बालक के साथ सहज संपर्क स्थापित कीजिये और उसे बढ़ाईये। यह सहज संपर्क आनंद देने वाला और प्रसन्न होना चाहिये। अध्यापक और बच्चों के शयन कक्ष के कर्मचारियों को बच्चों से दूर, अलग नहीं रखना चाहिये। उनका तो एक परिवार के समान बच्चों से घुल-मिल जाना चाहिये। अध्यापकों को अभिभावकों की, माता-पिता की भूमिका निभानी होती है। उन्हें अलिप्त तथा विरक्त नहीं होना चाहिये। बड़े बच्चे में और छोटे बच्चे में, बड़े भाई और छोटे भाई जैसा सहज संपर्क होता है वैसा ही संपर्क होना चाहिये। वे साथ में खेल सकते हैं। कनिष्ठ (कक्षा वाले) बच्चे वरिष्ठ बच्चों को प्रश्न पूछ सकते हैं और ज्येष्ठ बच्चों ने उनके उत्तर देने चाहिये।

प्रकृति से सहज संपर्क बढ़ाईये। पहाड़, नदियाँ, जंगल को देखते समय उन्होंने देखना चाहिये कि प्रकृति में क्या सहज है। बच्चों ने ऐसी आलोकित, प्रकाशरंजित स्थिति प्राप्त करनी चाहिये कि संपूर्ण विश्व सहज है। वे जो कुछ देख सकते हैं उसका संबंध सहज से जोड़ना चाहिये। आपने उनके अतिरिक्त लाड़ प्यार भी करने की या उनके जरूरत से ज़्यादा कड़े रहने की कोशिश नहीं करनी चाहिये। दोनों चीज़ें गलत हैं। उन्होंने एक बात अवश्य जाननी है कि आप उनसे प्रेम करते हैं या सहजयोगियों जैसा आदर करते हैं? क्योंकि वे सहजयोगी हैं। उनमें यह कल्पना पूरी तरह से बिंबित कर दीजिये, 'आप सहजयोगी हैं इसलिये हम सब आपका आदर करते हैं।' गलत स्थान पर वे चिल्ला नहीं सकते या गलत बर्ताव नहीं कर सकते क्योंकि वे सहजयोगी हैं। हमने उनसे बात करना जरूरी है। आपने उन पर यह जिम्मेदारी डालनी है कि, 'आपको महान कार्य करना है। लोगों को आत्मसाक्षात्कार देना है। आप जब

बड़े हो जाएंगे तो आपको ये करना पड़ेगा। आपको वो करना पड़ेगा। आपको दूर-दूर के देशों में जाना पड़ेगा। आपको ये जानना पड़ेगा। आप को वो जानना पड़ेगा।' एक बार बच्चों को जब आप यह सब बतायेंगे तब सहजयोगी का व्यक्तित्व विकसित करना वे शुरू कर देंगे। क्योंकि उनका जन्म ही वैसे हुआ है। पर अगर आप उनको उचित मार्ग में प्रवाहित नहीं करेंगे, तो हो सकता है कि वातावरण परिवेश के कारण वे दूसरी दिशाओं में चले जाएंगे। हमें अब बच्चों को सहजयोग के तत्वों के अनुसार विकसित करने का और बच्चों में ये तत्व पूरी तरह उतारने का एक बहुत बड़ा अवसर है।

बच्चों का मनोरंजन करना चाहिये और उन्हें नीरस, रूक्ष नहीं होने देना चाहिये। उन्हें छोटे-छोटे मकान बनाने दीजिये, बगीचा तैयार करने दीजिये। ऐसे काम उन्हें करने दीजिये कि उनका पूरा ध्यान उन कामों में ही रहेगा। उन्हें कहानियाँ, चुटकुले, गीत बताईये। चित्रकारी में उनकी मदद कीजिये। उन्हें मित्रता तथा सहवास की अनुभूति होनी चाहिये। उनका बोलना भी ध्यान से सुनिये, बहुत दिलचस्प होता है।

अध्याय १५

सब बच्चों से अपने बच्चों जैसा प्रेम कीजिये

सब बच्चों से ऐसा प्यार कीजिये कि जैसा आप अपने बच्चों से करते हो। यह अधिक अच्छे प्रकार से कायान्वित होगा। अगर किसी भी बच्चे के दोष दूर कर उसे सही बात बतायी जा रही है तो किसी का भी आक्षेप नहीं होना चाहिये। अगर आपके बच्चे की गलती किसी ने ठीक की, तो आपने उस व्यक्ति के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये कि उन्होंने आपके बच्चे की गलती सुधार कर उसे ठीक किया। तब बच्चों को सामूहिकता वालों से डर लगता है क्योंकि वे सोचते हैं कि सारी सामूहिकता एक साथ है, जब वे गलत आचरण करते हैं। अगर आप केवल अपने ही बच्चे की सहायता करना शुरू करते हैं, तो आपका बच्चा खूब चालाक बनता है। वह जानता है कि मुझे कोई कुछ भी नहीं कह सकता। अगर बच्चा बिगड़ गया है तो सारी सामूहिकता को उसका अनुभव हो जाता है। पर अगर उस बच्चे की किसी ने सहायता की है, तो बच्चे असभ्य बन जाते हैं। हम सबने सभी बच्चों को आधार देना है और यदि कोई बच्चा गलत है, तो हम सभी ने कहना चाहिये, 'हाँ, ठीक है, तो तुम गलत हो।' वे सभी आपके ही बच्चे हैं। इस तरह इस बात को समझना है। वे सामूहिक बालक हैं। आपको उनकी देखभाल करनी है। आपको उनकी चिन्ता करनी है। आपको उनकी मदद करनी है। हर एक चीज़ सामूहिकता के आधार पर करनी चाहिये। मान लीजिये कि एक बच्चा खराब है तो हम सबने उस बच्चे को बताना चाहिये कि, 'तुम खराब हो, अच्छे नहीं हो।' तब कहीं उसमें सुधार होता है। हमने उन बच्चों को यह भी बताना है, 'आप सब सहजयोगी हैं। आप ऐसा नहीं कर सकते। आप सहजयोगी हैं। आप महान हैं। आप ऐसा नहीं कर सकते।' और यह भी बहुत अच्छे प्रकार से कार्यान्वित होगा।

अध्याय १६

खेल

श्रीमाताजी बच्चों की रक्षा कर रही हैं। उन्होंने (बच्चों ने) आक्रमक खेलों के बारे में चिन्ता नहीं करनी चाहिये। खेल तो आनंद और मनोरंजन के लिये होने चाहिये। जब बच्चे आपस में खेलते हैं तो अन्ताक्षरी के खेल अच्छे होते हैं। और वे अपने खेल निर्माण करते हैं।

अध्याय १७

विश्वविद्यालयीन शिक्षा

विश्वविद्यालय तो नाम से ही विश्वविद्यालय जो रहे, तो ये ऐसे हो गये हैं कि जहाँ सारा विध्वंस, विनाश होता है। जब कि मैं बिलकुल निःसंदेह हूँ कि जो बच्चे सहज विद्यालयों में संस्कारित और संवर्धित किये गये हैं, वे कहीं भी जाएंगे तो भी नहीं बदलेंगे। इसका कारण यह है कि उनके स्वयं के व्यक्तित्व इतने विकसित हो गये होंगे कि उनके व्यक्तित्व का प्रभाव दूसरों पर पड़ेगा। सहजयोगी बदलते नहीं। वे दूसरों को बदल देते हैं।

संगणक, विद्यालय तथा महाविद्यालयों में सिखाये जा सकते हैं। परंतु आप स्वयं ही सर्वोत्तम संगणक हैं।

अध्याय १८

छात्रों के अध्ययन कक्षा में (क्लासरूम)

अध्यापकों ने विषय को रंजक, रुचि निर्माण करने वाला बनाना चाहिये। बच्चों के मन में अपने विषय के बारे में रुचि निर्माण करने के लिये, जागृत करने के लिये नये-नये उपाय खोजिये। वे गंभीर होने की आवश्यकता नहीं। यह खेल जैसा दिलचस्प भी हो सकता है।

गणक यंत्र (कैलक्यूलेटर) होने के बावजूद भी बच्चों के पहाड़े (Tables) याद करना अति आवश्यक है। हर एक बच्चे को एक दैनंदिनी (डायरी) रखनी चाहिये जिस में वे बच्चे कहानियाँ, अनुभव और निरीक्षण लिख सकते हैं।

बच्चे का अवधान सुधारने के लिये सारे प्रयास करने चाहिये।

बच्चों के बारे में मुख्य बात यह है कि वे जहाँ हैं उस स्थान पर उन्हें पूर्णतः सुरक्षित लगना चाहिये। सुरक्षा बच्चों के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण बात है। अगर उन्हें उस स्थान पर सुरक्षा का अनुभव नहीं आता, तो उन्हें संतुलन में लाने में हम समर्थ नहीं होंगे।

मॉन्टेसरी की सारी की सारी साधन सामग्री से बच्चों का चित्त खिलौनों में ही लगा रहता है। वे खिलौने के बहुत ही आदि हो जाते हैं। उनमें कुछ बहुत ही महंगे हैं। शिक्षा के लिये उपयुक्त होने वाले कुछ खिलौने लीजिये, पर बहुत ज़्यादा नहीं। (और छोटी कुर्सियों के बीच में से मारे जाने वाले लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े भी नहीं)

छात्रों के अध्ययन कक्ष नीरस, शुष्क नहीं होने चाहिये। कुछ फूल-पौंधे

होंगे तो बगीचे में बैठे हैं ऐसा लगेगा। अध्यापक का वेश-परिधान परिचारक (नर्स) जैसे नहीं होना चाहिये। बच्चों के सामने हंसिये। उन्हें दिखाईये कि हम खुश हैं। उन्हें दाद दीजिये, उनके गुणों की प्रशंसा कीजिये। पाँच या छः वर्ष के प्रत्येक बच्चे को रात में मालिश की जानी चाहिये। रात को उनके शरीर में तेल से मालिश कीजिये। हर एक चीज़ के ऑलिव तेल का उपयोग किया जा सकता है। मालिश के बाद गमछे (टुवाल) से उसके शरीर को अच्छे से पोंछ लीजिये। (अगर जरूरत है तो थोड़ी सी पाऊडर का उपयोग कीजिये। पर तब उनका चेहरा ढंक लीजिये ताकि पाऊडर उनके नाक में ना जाये।) सुबह नहाने के पहले उनके सिर में मालिश कीजिये और नाक-कान में तेल डालिये।

नाटक, नृत्य, शास्त्रीय नृत्य, संगीत, कला और हस्तकलायें सिखाईये। उन्हें जो जानना जरूरी नहीं, उस बात को उन्हें मत सिखाईये। जब तक वे गाड़ी चलाते नहीं, तब तक उन्हें रास्तों के नाम जानने की जरूरत नहीं।

निरर्थक और मूढ़ कृतियों की पकड़े में मत आईये जैसे काँटा और छूरी एक जगह किसी खास ढंग से ही रखना है। पेन्सिल ठीक से कैसी पकड़नी है यह सीखना उनके लिये बहुत ही महत्वपूर्ण है। पर अंक और वर्णाक्षर लिखने के लिये उन पर जोर मत दीजिये। उन्हें अंक और वर्णाक्षर तभी सिखाईये जब वे उसके लिये तैयार हैं। पर तब बच्चे बहुत ही छोटे नहीं होने चाहिये। (इंद्रियों से मिलने वाली) संवेदनायें, उन्हें धातुओं की, जैसे सोना, चांदी इ. और संगमरमर और उसके विभिन्न प्रकार, गोमेद की संवेदना दृष्टि और स्पर्श से होने दीजिये। पदार्थों की अनुभूति और किस इंद्रिय से उसकी संवेदना होती है इसका बोध उन्हें होने दीजिये। मिट्टी के बर्तन भी! कृत्रिम धागों से बनी वस्तुओं को टालना है।

चार-पाँच भिन्न भिन्न प्रकार के चित्रित, आकृतियुक्त वस्त्रों का जायजा लेने दीजिये और उसका गुणग्रहण करने दीजिये कि उन्हें कौनसा पसंद है और

कौन सा पसंद नहीं है।

उन्हें तारों के संबंध में बताईये। तारे क्या हैं, ग्रह क्या हैं... मृत, निर्जीव वस्तुओं की अपेक्षा उन्हें सजीव वस्तुओं के संबंध में बताईये।

वृक्ष क्या हैं और लकड़ी का उपयोग वृक्षों को व्यक्ति समझ कर उनसे व्यवहार कीजिये, उनकी देखभाल कीजिये, उन्हें नाम दीजिये।

प्रत्येक सजीव वस्तु की देखभाल करनी ही चाहिये। (जब बच्चे गलीचे पर कुछ द्रव गिराते हैं तो हर कोई डर के मारे वहाँ से दौड़ता है।) बच्चे को आश्वस्त कीजिये कि ठीक है, कोई बात नहीं। अन्यथा आप उस बच्चे का विश्वास पूरी तरह तोड़ देते हैं। जब बच्चे सो जाते हैं, तब गलीचा साफ कीजिये। (रोजमर्रा की जगहों को छोड़ कर) बाहर घूमना बहुत अच्छा है। पुराण वस्तुसंग्रहालय या प्राणिसंग्रहालय। उन्हें बगीचे, बड़े उद्यान भी दिखाईये। पर युद्ध के उपकरण-साधनों को दिखाया नहीं जाना चाहिये। उन्हें शस्त्रों के साथ नहीं खेलना है।

बच्चों को बाहर ले जाईये और जिस स्थान पर वे जाने वाले हैं, उसके लिये उन्हें तैयार कीजिये। किस चीज़ की अपेक्षा है यह उन्हें बताईये। उसके बारे में उन्हें बताईये। बाहर जाने के बाद दूसरों का आदर कैसे करना है, मेहमानों का आदर कैसे करना है और शुभ प्रभात (गुड मॉर्निंग), शुभ संध्या (गुड इविनिंग) और शुभ रात्रि (गुड नाईट) कैसे कहना है यह भी बताईये।

उन्हें एक दूसरों के साथ गोलाकार में बैठने दीजिये और देवताओं के तथा श्रीमाताजी के विषय में बोलने दीजिये।

विद्यालय, पाठशाला सहजयोग से संबंध, संपर्क या संवाद करने का एक वाहन, द्वार है। पर पहली बात यह है कि बच्चे सहजयोगी होने चाहिये।

ऐसा बिलकुल कुछ भी नहीं...'मुझे पसंद है..।' बच्चों ने मिल बाँट कर लेना, दूसरों को देना इन बातों का आनंद लेना ही चाहिये। देने का आनंद। हमने ऐसा ही कहना चाहिये, 'भगवान को पसंद नहीं....', न कि 'मुझे पसंद नहीं!'

संपूर्ण का हम एक अविभाज्य अंश हैं और हम सब एक हैं इसकी अनुभूति के लिये उन्हें प्रोत्साहित कीजिये। तब बच्चे सामूहिक एकता का आनंद लूटते हैं। सहजयोग का अभ्यास, आचरण उन्हें सिखाईये।

बच्चों को बताना ही चाहिये कि वे सहजयोगी हैं और उनमें प्रतिष्ठा, गरिमा होनी ही चाहिये। 'ईश्वर ने आपको एक महान कार्य के लिये चुन लिया। आप एक सहजयोगी हैं।' तब उन्हें अपने उत्तरदायित्व का बोध होता है कि उन्हें अधिक अच्छे प्रकार से व्यवहार करना है।

बच्चों को सदैव बताईये कि वे विशेष प्रकार के लोग हैं। 'तो आप इस तरह कैसे बर्ताव कर सकते हैं, कैसे बोल सकते हैं?'

जब छोटासा बच्चा हर एक चीज़ खुद के लिये करना चाहता है, तो ठीक है। पर तब तक ही जब तक दूसरों के लिये भी वैसे ही करने की उनकी इच्छा हो। इसलिये वह लड़की खुद अपने लिये नाश्ते में चीज़ें ले लेती है और अब वह हमें भी खाने के लिये कुछ देती है। इस प्रकार बच्चों का अवधान अपनी ओर से दूसरों की ओर खींचा जाता है। हमेशा आपस में यह बदलाव बहुत ही महत्वपूर्ण है। खाना दूसरों के साथ बाँट कर खाना या दूसरों के बिस्तर तैयार करना यह वहीं बात है।

प्रत्येक व्यक्ति ने बच्चों से बात करनी ही है। प्रत्येक व्यक्ति ने बच्चों में रुचि लेनी चाहिये। उन्हें छोटे-छोटे उपहार देने चाहिये।

बच्चों को बहुत अधिक चूमना नहीं चाहिये (जंतुसंसर्क के कारण)।

चेहरे पर तो बिलकुल ही नहीं। उनके माथे के ऊपरी हिस्से पर या बाजू में चूमना ठीक है।

जिस व्यक्ति पर संस्कार अच्छी तरह से किये गये हैं वह आदर करने वाला व्यक्ति होता है। जिसका आदर किया जाता है उस व्यक्ति का यही लक्षण है।

बच्चों को चालाकी से, धूर्तता से काम करने वाले मत बनाईये। उन्हें अधिक नम्र, मधुर, कोमल और प्रेम करने वाले बनाईये।

उनमें सावधानी, दक्षता उभरनी चाहिये। आत्मसंतुष्टि व्यक्ति को अंदर से सुस्त बनाती है।

उन्होंने स्पर्धा नहीं करनी है। अगर किसी बात में स्पर्धा करनी है तो भलाई में, आज्ञाकारिता, मधुरता में तथा दूसरों की प्यार से देखभाल करने में करनी है। तब तो वे अधिक स्थिर, संतुलित और प्रतिष्ठित बन जाएंगे। इसके लिये उन्हें पुरस्कार दीजिये। 'अब आप रास्ते पर कैसे चलेंगे? आप श्रीमाताजी के सामने झुक कर प्रणाम कैसे करेंगे?' तो बच्चे हमें बतायेंगे और चक्रों के संबंध में भी बतायेंगे।

सामान्यत: जब हम किसी को देखते हैं या मिलते हैं (तो कहते हैं), 'तुम बहुत सुंदर दिखते हो' या फिर 'आज तो तुम बहुत खुश नज़र आ रहे हो।' यह तो केवल बाहरी चीज़ है। ऐसा प्रश्न पूछिये कि जो अंतरंग से संबंधित हो। 'क्या तुम ठीक हो?' या तो कहिये कि उनका वेश बहुत सुंदर है, अगर वह किसी अलग देश का हो या उसी किसी प्रकार का हो।

अब सुंदरता के संबंध में, सुंदर कैसे दिखना है? केवल व्यवस्थित नहीं। आसपास का परिवेश विकृत, अस्वस्थ नहीं होना चाहिये। आजूबाजू की चीज़ें सजीली होनी चाहिये। पश्चिमी देशों में सुंदरता कृत्रिम होती है।

अपने प्राकृतिक रूप से हमें सुंदर होना चाहिये। प्राकृतिक वस्तुओं का अधिकता से स्वीकार और उपयोग होना चाहिये। उदाहरण के लिये भारत में चिकनी मिट्टी लगा कर नहाते-धोते हैं। नंगे पैरों से गास पर चलना अच्छा है। उससे दृष्टि अधिक साफ होती है और तलवे के बाँक के लिये भी वह अच्छा है।

बाल - रात को बालों में थोड़ा तेल डालना चाहिये। चेहरे के लिये चना दाल का आटा साबुन से बेहतर है। दूध में ब्रेड डाल कर उससे बच्चे का चेहरा साफ कीजिये। इससे त्वचा बहुत अच्छी साफ होती है। प्राकृकि वस्तुयें।

बच्चों का वेश सेना के लोगों जैसा नहीं होना चाहिये। वेशभूषा ऐसी चाहिये कि जिससे उन्हें अधिक प्रतिष्ठित होने की अनुभूति हो। कपडे रंगबिरंगी चाहिये पर राखी रंग के नहीं। फूलों के चित्र या छाप अच्छे रहेंगे। लड़कों को चौकोर नमूने वाले कैदियों जैसे कपड़े मत दीजिये। उनका वेश अधिक सुरुचिपूर्ण होना चाहिये जिससे वे परिधान के संबंध उचित मूल्यमापन कर सकेंगे। सेना के समान पेहेराव बिलकुल नहीं। बहुत सारी विविधतायें। बच्चों ने धूमिल या काले रंग के कपड़े नहीं पहनने हैं। वह तो ऐसे दिखता है कि कपड़ों में कीचड़ मिल गया है।

नाखून के लिये तैलरंगों का उपयोग नहीं करना है। उनके नाखूनों को रंगाने के लिये मेहंदी का उपयोग कीजिये। यह एक प्राकृतिक उत्पादन हैं। लड़कियों ने चूड़ियाँ पहननी चाहिये। यह स्वाभाविक ही स्त्रियों के समान होने में मदद करता है। अगर कोई लड़की पुरुष के समान बनने की कोशिश करती है तो उन लड़कियों को इतना नीचे लाईये कि जैसी विनीत उन्होंने होना चाहिये। जीन्स बिलकुल नहीं।

आरती बच्चों को साथ में लेकर कीजिये। बहुत सारा संगीत, वाद्य इ. उसके साथ होने दीजिये। उनको लय की समझ और गीत कैसे गाना है इसकी भी समझ आनी चाहिये। सुर में गाना बहुत महत्वपूर्ण है। सपनों वाली, तरल

परियों की दुनिया नहीं। उन्हें इधर-उधर हवा में तैरने, बहने मत दीजिये। उन्हें वास्तव दिखाईये। वे कवि भी बन सकते हैं। पर जैसे कवि ब्लैक ने किया वैसा असली प्रतिमाओं का प्रयोग उन्हें करना है।

दूसरों के गुणों को ग्रहण करने के लिये, दाद देने के लिये दूसरे देशों के लोगों के परिधान देखिये। भिन्न-भिन्न देशों की भिन्न-भिन्न वेशभूषा और प्रसाधन जिन्होंने किया है ऐसी गुड्डियों का संग्रह कितना सुंदर होगा।

बच्चों को अलग-अलग वेश पहनायें जैसे कि एक आंतरराष्ट्रीय विद्यालय में होना चाहिये। 'धन्यवाद' उनकी अपनी अपनी भाषा में कैसे कहना है यह उनको सिखाईये। तो उससे बालकों की मनोवृत्ति विशाल, विकसित हो जाती है।

बच्चों ने बच्चों जैसे ही होना चाहिये। बचपन में ही उन्हें प्रौढ बनाने की आवश्यकता नहीं। उमर में बड़े लोग बड़ी कुशलता से बातें बनाते-बिगाड़ते हैं। बच्चे की अबोधिता का विकास कीजिये। बच्चों के सामने मिसेस थेचर या दक्षिण अफ्रिका की चर्चा मत कीजिये। पर चीन के बच्चों से वे कैसा व्यवहार करते हैं या फिर रूसी बच्चों का पहनावा कैसा होता है, इसके बारे में बोलिये। बच्चे कैसा वेश धारण करते हैं इसके फोटोग्राफ (छायाचित्र) एक दूसरों को भेजिये। 'मेरा' इस उच्चारण के पीछे कौनसी भावनायें हैं, उसकी ओर ध्यान दीजिये। उदाहरण के लिये उन्हें हमेशा वहीं आसन या जगह मत दीजिये। कहिये, 'हमारा' और 'हम'।

इस आयु में बच्चे सर्जनशील होते हैं। जैसे कि चित्र बनाना, उसको रंग देना। 'अब चलिये हम एक सहजयोगी का चित्र बनायेंगे' और 'और किसी बुरे आदमी का नहीं। अब फूल बनाईये।' मार्गदर्शन! उन्हें जो कुछ लगता है या उनकी इच्छा है वह मत करने दीजिये। अन्यथा बाद में बड़े होने पर वे किसीसे निर्देश नहीं ले सकते। यह कोई मुक्त, मनमौजी धंधा नहीं है। अभी तो

बढ़े ही नहीं, बड़े नहीं हो गये। उन्हें निर्देश दीजिये और निर्देश का पालन करना वे सीखते हैं, उन्हें सीखना है।

दूसरों को प्रसन्न करना, दूसरों के साथ तथा उमर में बड़े लोगों के साथ सभ्य, मृदु रहना ये सारी बातें उन्हें सीखनी ही पड़ेंगी।

अगर बच्चे लड़झगड़ रहे हैं कि, 'यह मेरा है', तो आप उस चीज़ को ले लीजिये। उसको हमेशा ऊपर रख दीजिये और कहिये, 'यह माँ का; (श्रीमाताजी) का है।'

उनके बाहर से दिखाये जाने वाले व्यवहार में सुधार हुआ है कि नहीं इसे ध्यान से देखिये। उनकी चैतन्य लहरों में सुधार हुआ या नहीं इसकी भी जाँच कीजिये। हो सकता है कि यह केवल उपरी स्तर पर हो।

सजा - सब लोगों के सामने कभी भी सजा नहीं देनी है। कभी भी जोरों से मत चिल्लाईये। उनसे आवश्यक बातें कीजिये। उनको तीन बार सूचित कीजिये। चौथी बार उन्हें दण्ड दीजिये। और पाँचवी बार दूसरों की उपस्थिति में उन्हें सजा दीजिये।

उनकी धूर्तता या चालाकी पर निगरानी रखिये। चालाकी और धूर्तता बिलकुल चलनी नहीं देनी है। एक तरफ चालाकी है और दूसरी तरफ अबोध, नटखटपन भी है। अबोध नटखटपन मीठा होता है। चालाकी का मतलब जानबूझ कर किसी को पीड़ा देना। धूर्तता याने छलकपट का खेल शुरू करना। अबोध अपकार अच्छा होता है।

पर उन्होंने दूसरों को नहीं डराना है। उदाहरण के लिये उन्हें बताईये कि छिपकलियाँ, साँप, मकड़ी, झिंगुर, मच्छर, खटमल ये बुरे प्राणी हैं। पर बिल्ली के पिल्ले या चूजे कितने प्यारे होते हैं! कुत्ते भी अच्छे होते हैं पर उनके बालें में जो जुएं या कीड़े जो उन पर रह कर ही जीने वाले अर्थात

परोपजीवी कीटक हैं वे बुरे हैं। उन्हें बताईये कि अच्छा क्या है और बुरा क्या है। उन्हें बताईये कि काँटे फूलों की रक्षा कैसे करते हैं। काँटे तो फूलों के अन्दर नहीं होते। कहानी को स्पष्ट करके बताईये कि काँटे रक्षा कैसी करते हैं। यह तो एक सजीव वस्तु है।

दूसरों का विचार करना, उनसे स्नेह रखना, उन पर अवधान रखना और प्राणियों से भी ऐसा ही व्यवहार करना ऐसी चीज़ों को प्रोत्साहित करना है। बच्चे अबोध, निश्च्छल होते हैं। बड़े लोगों का आचरण अवश्य नैतिक होना चाहिये। साथ में सोना, आलिंगन देना या चुंबन लेना ये सारी बातें बच्चों के सामने नहीं करनी चाहिये। उनको बहुत कम आयु में उन बातों की कल्पना या समझ आ जाती है। नग्नता बिलकुल नहीं। अगर उन्होंने अपनी चड्डियाँ (पैंटीज) उतार दी तो 'शेम, शेम, शेम-शरम करो, शरम करो' ऐसा कहना है। शरम क्या होती है इसकी कल्पना या समझ उन्हें आनी चाहिये।

अगर कोई बच्चा अतिमात्र क्रियाशील, चुलबुला है, तो उसका इलाज कीजिये। दाहिनी बाजू नीचे लानी है। इन तकनीकों का (सहज तंत्रों का) उपयोग कीजिये। यकृत की पीड़ा के लिये गुलकंद बहुत अच्छा होता है। (गुलकंद - गुलाबी रंग के गुलाब की पंखुड़िया जब तक गाढ़ी नहीं होती, तब तक चीनी के साथ पकाना) यकृत पर बरफ भी रखिये।

उन्होंने अपने दांतों को मंजन करना चाहिये और अपने मसूड़ों को भी रगड़ना चाहिये।

पीने के लिये चैतन्य लहरें से भारित पानी का उपयोग कीजिये। शक्कर भी चैतन्य लहरों से भारित होनी चाहिये। यत्र तत्र सर्वत्र।

उनको दिखाईये कि श्रीमाताजी के छायाचित्र की ओर उन्होंने अपनी पीठ नहीं करनी या दिखानी है। हम जितने अधिक आदर करने वाले होंगे,

उतने ही बच्चे अधिक आदर करने वाले होंगे। उनकी उपस्थिति में हमने विवाद नहीं करना चाहिये। हमने जोर से चिल्लाना भी नहीं चाहिये। उनकी उपस्थिति में हमने शान्ति से रहना चाहिये। शान्ति का पालन तो करना ही है।

जब वे अच्छी-प्यारी चीज़ें करते हैं तो उन्हें छोड़ दीजिये। अन्यथा वे अपने प्रति सतर्क हो जाते हैं। अगर हमारी प्रतिक्रियायें तीव्र होती हैं, तो उन्हें आकस्मिक भय हो जाता है, धक्का लगता है। उन्हें अचानक सदमा मत दीजिये। छोटे बच्चों को ऐसे दिखाना कि यह एक अच्छा, सुखी और शान्तिपूर्ण संसार है, यह चीज़ उनके लिये अधिक प्रोत्साहन देने वाली है। और फिर वे ड़रपोक न होकर बढ़ सकते हैं। हिंसा की कहानियों को टालिये।

उन्हें तीक्ष्ण, नुकीली चीज़ें नहीं देनी चाहिये। उन्हें बताईये कि तीक्ष्ण वस्तुओं से उन्हें सावधान रहना है जैसे कि धातु की मेज़ का कोना!

उनके पास अधिक पारदर्शिकायें या बगीचे में लगने वाली चीज़े रहने दीजिये।

प्रेम और प्रज्ञा इन दोनों में संतुलन होना चाहिये।

किसी भी चीज़ का प्यार से और बुद्धिमानी से उपयोग करना है। दुराचरण करने वाले बालक को ठीक करने के लिये बुद्धिमत्ता का उपयोग कीजिये। पर बच्चे को यह मालूम होना ही चाहिये कि आप उससे प्यार करते हो।

विद्यालय की वास्तु सुंदर होनी चाहिये। सौंदर्यतत्व की संवेदना, अनुभूति बालक में पर्यावरण से जागृत होती है और बढ़ते रहती है। वास्तु कलात्मक हो सकती है या विदेशी वास्तुओं की तरह, पर वातावरण निश्चित रूप से धार्मिक ही होना चाहिये।

मेरे फूलों से बच्चों के प्रति

आप जीवन से रूष्ट हैं
जैसे कि नन्हे बच्चे -
जिनकी माँ अंधेरे में खो गयी है!

आप का उदास मलिन मुख
व्यक्त करता है आपकी हताशा
क्योंकि आपकी यात्रा का अन्त निष्फल है।

आप तो सुंदरता खोजने के लिये
कुरूपता ओढ़ कर बैठे हैं।
सत्य के नाम पर
आप प्रत्येक वस्तु को
असत्य का नाम देते हैं।
प्रेम का प्याला भरने के लिये
आप भावनाओं को
रिक्त कर देते हैं।

मेरे सुंदर मधुर बच्चों, मेरे प्रिय पुत्रों,
युद्ध करने से आपको शान्ति कैसे मिल सकती है?
युद्ध-स्वयं से, अपने अस्तित्व से और
स्वयं आनंद से भी!
पर्याप्त हो गये हैं, अब बस कर दो,
ये संन्यास, त्याग के आपके प्रयास-
जो सान्त्वना के कृत्रिम मुखौटे हैं।

अब कमलपुष्प के पंखुड़ियों में -
आपकी दयामयी माँ की गोद में
विश्राम करो।

मैं आपके जीवन को
सुंदर बहारों से सजा दूंगी।
और आपके क्षण और जीवन
आनंद के परिमल से भर दूंगी!
मैं आपके मस्तक पर
दिव्य प्रेम का अभिषेक करूंगी!
आपकी यातनाओं को
मैं अब अधिक नहीं सह सकती।
मुझे आपको प्रेम के महासागर में डुबोने दो
जिससे आप अपना अस्तित्व
उस एक महान में खो दे।
जो कि आपकी आत्मा की कलि के कोश में
मंद हास्य कर रहा है।
गूढ़ता में चुपके से छुपा है
सदैव आपको छलते, चिढ़ाते हुये।
जान लो, अनुभव करो,
और आप उस महान को खोज पाओगे।
आपके कण कण में, तंतु में
परमाह्लाद के आनंद को स्पन्दित करते हुये
और पूरे विश्व को प्रकाश से लपेटते हुये
आच्छादित करते हुये!

- माँ निर्मला

सर्वाधिकार सुरक्षित

बिना पूर्व आज्ञा के इस पुस्तक के किसी भी भाग की प्रतिलिपि या किसी भी रूप में प्रसारण वर्जित है। कोई भी व्यक्ति अनधिकृत रूप से यदि इसका प्रकाशन करता है तो उस पर हानिपूर्ति का दावा किया जाएगा।

visit us at www.sahajayoga.org to know more about Sahaja Yoga.